काव्य-सौन्दर्य के तत्त्व

||रस, छन्द और अलंकार||

(क) रस

कविता, कहानी, उपन्यास आदि को पढ़ने या सुनने से एवं नाटक को देखने से जिस आनन्द की अनुभूति होती है, उसे 'रस' कहते हैं। रस काव्य की आत्मा है। आचार्य विश्वनाथ ने साहित्य-दर्पण में काव्य की परिभाषा देते हुए लिखा है—'वाक्यं रसात्मकं काव्यं' अर्थात् रसात्मक वाक्य काव्य है। रस की निष्पत्ति के सम्बन्ध में भरतमुनि ने नाट्यशास्त्र में व्याख्या की है—**'विभावानुभावव्यभिचारिसंयोगाद्रसनिष्पत्तिः'** अर्थात् विभाव, अनुभाव और व्यभिचारी भावों के संयोग से रस की निष्पत्ति होती है।

रसों के आधार भाव हैं। भाव मन के विकारों को कहते हैं। ये दो प्रकार के होते हैं—स्थायी भाव और संचारी भाव। यही काव्य के अंग कहलाते हैं।

➡ स्थायी भाव

रस रूप में पुष्ट या परिणत होनेवाला तथा सम्पूर्ण प्रसंग में व्याप्त रहनेवाला भाव स्थायी भाव कहलाता है। स्थायी भाव नौ माने गये हैं—रति, हास, शोक, क्रोध, उत्साह, भय, जुगुप्सा, विस्मय और निर्वेद। वात्सल्य नाम का दसवाँ स्थायी भाव भी स्वीकार किया जाता है।

रति—स्त्री-पुरुष के परस्पर प्रेम-भाव को रति कहते हैं।

हास—किसी के अंगों, वेश-भूषा, वाणी आदि के विकारों के ज्ञान से उत्पन्न प्रफुल्लता को हास कहते हैं।

शोक—इष्ट के नाश अथवा अनिष्टागम के कारण मन में उत्पन्न व्याकुलता शोक है।

क्रोध—अपना काम बिगाड़नेवाले अपराधी को दण्ड देने के लिए उत्तेजित करनेवाली मनोवृत्ति क्रोध कहलाती है।

उत्साह—दान, दया और वीरता आदि के प्रसंग से उत्तरोत्तर उन्नत होनेवाली मनोवृत्ति को उत्साह कहते हैं।

भय—प्रबल अनिष्ट करने में समर्थ विषयों को देखकर मन में जो व्याकुलता होती है, उसे भय कहते हैं।

जुगुप्सा—घृणा उत्पन्न करनेवाली वस्तुओं को देखकर उनसे सम्बन्ध न रखने के लिए बाध्य करनेवाली मनोवृत्ति को जुगुप्सा कहते हैं।

विस्मय—किसी असाधारण अथवा अलौकिक वस्तु को देखकर जो आश्चर्य होता है, उसे विस्मय कहते हैं।

निर्वेद—संसार के प्रति त्याग-भाव को निर्वेद कहते हैं।

वात्सल्य—पुत्रादि के प्रति सहज स्नेह-भाव वात्सल्य है।

➡ विभाव

जो व्यक्ति, वस्तु, परिस्थितियाँ आदि स्थायी भावों को जागरित या उद्दीप्त करती हैं; उन्हें विभाव कहते हैं। विभाव दो प्रकार के होते हैं (1) आलम्बन (2) उद्दीपन।

(1) आलम्बन विभाव—स्थायी भाव जिन व्यक्तियों, वस्तुओं आदि का अवलम्ब लेकर अपने को प्रकट करते हैं, उन्हें आलम्बन विभाव कहते हैं। इसके दो भेद हैं—आश्रय और विषय।

आश्रय—जिस व्यक्ति के मन में रति आदि स्थायी भाव उत्पन्न होते हैं, उसे आश्रय कहते हैं।

विषय—जिस व्यक्ति या वस्तु के कारण आश्रय के चित्त में रति आदि स्थायी भाव उत्पन्न होते हैं, उसे विषय कहते हैं।

(2) उद्दीपन विभाव—भाव को उद्दीप्त अथवा तीव्र करनेवाली वस्तुएँ, चेष्टाएँ आदि को उद्दीपन विभाव कहते हैं।

उदाहरणार्थ– सुन्दर, पुष्पित और एकान्त उद्यान में शकुन्तला को देखकर दुष्यन्त के हृदय में रति भाव जागृत होता है। यहाँ शकुन्तला आलम्बन विभाव है और पुष्पित तथा एकान्त उद्यान उद्दीपन विभाव। दुष्यन्त आश्रय है। प्राय: नायक एवं नायिका आलम्बन विभाव होते हैं। शृंगार के उद्दीपन विभाव प्राय: बसन्त काल, उद्यान, शीतल मन्द-सुगन्धित पवन, भ्रमर-गुंजन इत्यादि होते हैं।

➥ अनुभाव

आश्रयगत आलम्बन की उन चेष्टाओं को जो उसे स्थायी भाव का अनुभव कराती हैं, अनुभाव कहते हैं। भाव कारण और अनुभाव कार्य हैं।

अनुभाव चार प्रकार के माने गये हैं—कायिक, मानसिक, आहार्य और सात्विक।

(1) कायिक अनुभाव—आँख, भौंह, हाथ आदि शरीर के अंगों के द्वारा जो चेष्टाएँ की जाती हैं।

(2) मानसिक अनुभाव—मानसिक चेष्टाओं को मानसिक अनुभाव कहते हैं।

(3) आहार्य अनुभाव—वेशभूषा से जो भाव प्रदर्शित किये जाते हैं।

(4) सात्विक अनुभाव—शरीर के सहज अंग विकार।

➥ संचारी भाव

आश्रय के चित्त में उत्पन्न होनेवाले अस्थिर मनोविकारों को संचारी भाव कहते हैं। उदाहरणार्थ, शृंगार रस के प्रकरण में शकुन्तला से प्रीतिबद्ध दुष्यन्त के चित्त में उल्लास, चपलता, व्याकुलता आदि भाव संचारी भाव हैं। इन्हें व्यभिचारी भाव भी कहते हैं। इनकी संख्या 33 मानी गयी है—

निर्वेद, आवेग, दैन्य, श्रम, मद, जड़ता, उग्रता, मोह, विबोध, स्वप्न, अपस्मार, गर्व, मरण, आलस्य, अमर्ष, निद्रा, अवहित्था, उत्सुकता, उन्माद, शंका, स्मृति, मति, व्याधि, संत्रास, लज्जा, हर्ष, असूया, विषाद, धृति, चपलता, ग्लानि, चिन्ता और वितर्क। स्थायीभाव उत्पन्न होकर नष्ट नहीं होते और संचारी भाव पानी के बुलबुलों की भाँति बनते-मिटते रहते हैं।

प्रत्येक रस का स्थायी भाव नियत है, जबकि एक ही संचारी भाव अनेक रसों के साथ रह सकता है।

इन्हीं विभाव, अनुभाव और संचारी भाव के संयोग से स्थायी भाव रस दशा को प्राप्त होता है।

रस और उनके स्थायी भाव

क्रम सं०	रस	स्थायी भाव	क्रम सं०	रस	स्थायी भाव
1.	शृंगार	रति	6.	भयानक	भय
2.	हास्य	हास	7.	वीभत्स	जुगुप्सा
3.	करुण	शोक	8.	अद्भुत	विस्मय
4.	रौद्र	क्रोध	9	शान्त	निर्वेद
5.	वीर	उत्साह	10.	वत्सल	वात्सल्य

(1) शृंगार रस

सहृदय के चित्त में रति नामक स्थायी भाव का जब विभाव, अनुभाव और संचारी भाव से संयोग होता है तो वह

शृंगार रस का रूप धारण कर लेता है। उसके दो भेद होते हैं—संयोग और वियोग, इन्हें क्रमशः संभोग एवं विप्रलम्भ भी कहते हैं।

(i) **संयोग शृंगार**—नायक और नायिका के मिलन का वर्णन संयोग शृंगार कहलाता है। उदाहरण—

कौन हो तुम वसंत के दूत
विरस पतझड़ में अति सुकुमार;
घन तिमिर में चपला की रेख
तपन में शीतल मंद बयार!

—प्रसाद : कामायनी

इसमें रति स्थायी भाव है। आलम्बन विभाव हैं—श्रद्धा (विषय) और मनु (आश्रय)। उद्दीपन विभाव हैं—एकान्त प्रदेश, श्रद्धा की कमनीयता, कोकिल-कण्ठ, रम्य परिधान। संचारी भाव हैं—आश्रय मनु के हर्ष, चपलता, आशा, उत्सुकता आदि भाव।

इस प्रकार विभावादि से पुष्ट रति स्थायी भाव शृंगार रस की दशा को प्राप्त हुआ है।

(ii) **वियोग शृंगार**—जिस रचना में नायक और नायिका के मिलन का अभाव रहता है और विरह वर्णन होता है, वहाँ वियोग शृंगार होता है। उदाहरण—

मेरे प्यारे नव जलद से कंज से नेत्रवाले।
जाके आये न मधुबन से औ न भेजा संदेशा।
मैं रो रो के प्रिय-विरह से बावली हो रही हूँ।
जा के मेरी सब दुख-कथा श्याम को तू सुना दे॥

—हरिऔध : प्रियप्रवास

इस छन्द में विरहिणी राधा की विरह-दशा का वर्णन किया गया है। रति स्थायी भाव है। राधा आश्रय और श्रीकृष्ण आलम्बन हैं। शीतल, मन्द पवन और एकान्त उद्दीपन विभाव हैं। स्मृति, रुदन, चपलता, आवेग, उन्माद आदि संचारियों से पुष्ट श्रीकृष्ण से मिलन के अभाव में यहाँ वियोग शृंगार रस का परिपाक हुआ है।

(2) हास्य रस

अपने अथवा पराये परिधान, वचन अथवा क्रिया-कलाप आदि से उत्पन्न हुआ हास नामक स्थायी भाव विभाव, अनुभाव और संचारी भाव के संयोग से हास्य रस का रूप ग्रहण करता है। उदाहरण—

मातहिं पितहिं उरिन भये नीके।
गुरु ऋण रहा सोच बड़ जी के॥ **—तुलसी : रामचरितमानस**

परशुराम-लक्ष्मण संवाद में लक्ष्मण की यह हास्यमय उक्ति है। हास्य इसका स्थायी भाव है। परशुराम आलम्बन हैं। उनकी झुँझलाहट उद्दीपन है। हर्ष, चपलता आदि संचारी भाव हैं। इन सबसे पुष्ट हास स्थायी हास्य रस दशा को प्राप्त हुआ है।

(3) करुण रस

शोक स्थायी भाव, विभाव, अनुभाव और संचारी भाव के संयोग से करुण रस की दशा को प्राप्त होता है। उदाहरण—

जथा पंख बिनु खग अति दीना। मनि बिनु फनि करिबर कर हीना॥
अस मम जिवन बंधु बिनु तोही। जौ जड़ दैव जियावइ मोही॥

—तुलसी : रामचरितमानस

यहाँ लक्ष्मण की मूर्च्छा पर राम-विलाप प्रस्तुत किया गया है। शोक स्थायी भाव है। लक्ष्मण आलम्बन और राम आश्रय हैं। राम के उद्‌गार अनुभाव हैं। हनुमान् का विलम्ब उद्दीपन एवं दैन्य, चिन्ता, व्याकुलता, स्मृति आदि संचारी हैं। इन सबसे पुष्ट शोक स्थायी करुण रस दशा को प्राप्त हुआ है।

(4) रौद्र रस

विभाव, अनुभाव और संचारी भाव के संयोग से क्रोध नामक स्थायी भाव रौद्र रस का रूप धारण कर लेता है। उदाहरण—

ज्वलल्ललाट पर अदम्य, तेज वर्तमान था
प्रचण्ड मान भंग जन्य, क्रोध वर्तमान था
ज्वलन्त पुच्छ-बाहु व्योम में उछालते हुए
अराति पर असह्य अग्नि-दृष्टि डालते हुए
उठे कि दिग-दिगन्त में अवर्ण्य ज्योति छा गई।
कपीश के शरीर में प्रभा स्वयं समा गई।

—श्यामनारायण पाण्डेय : जय हनुमान्

इस पद में लंका में हनुमान्‌जी की पूँछ के जलाये जाने पर उनकी प्रतिक्रिया का वर्णन है। यहाँ क्रोध स्थायी भाव है। हनुमान् आश्रय हैं। शत्रु आलम्बन है। राक्षसों का सामने पड़ना उद्‌दीपन, पूँछ का आकाश में उछालना, अग्नि-दृष्टि डालना, तन का तेज आदि अनुभाव हैं। आवेश, चपलता, उग्रता आदि संचारी भाव हैं। इन सबसे पुष्ट क्रोध स्थायी भाव ने रौद्र रस का रूप ग्रहण किया है।

(5) वीर रस

विभाव, अनुभाव और संचारी भाव के संयोग से उत्साह नामक स्थायी भाव वीर रस की दशा को प्राप्त होता है। उदाहरण–

आये होंगे यदि भरत कुमति-वश वन में,
तो मैंने यह संकल्प किया है मन में—
उनको इस शर का लक्ष्य चुनूँगा क्षण में,
प्रतिषेध आपका भी न सुनूँगा रण में।

—मैथिलीशरण गुप्त : साकेत

इस पद में उत्साह स्थायी भाव है। लक्ष्मण आश्रय और भरत आलम्बन हैं। उनके वन में आगमन का समाचार उद्‌दीपन है। लक्ष्मण के वचन अनुभाव हैं। उत्सुकता, उग्रता, चपलता आदि संचारी भाव हैं। इनसे पुष्ट उत्साह स्थायी भाव वीर रस दशा को प्राप्त हुआ है।

(6) भयानक रस

विभाव, अनुभाव और संचारी भाव के संयोग से भय नामक स्थायी भाव भयानक रस का रूप ग्रहण करता है। उदाहरण—

लंका की सेना तो कपि के गर्जन रव से काँप गई।
हनूमान के भीषण दर्शन से विनाश ही भाँप गई।
उस कंपित शंकित सेना पर कपि नाहर की मार पड़ी।
त्राहि-त्राहि शिव त्राहि-त्राहि शिव की सब ओर पुकार पड़ी।।

–श्यामनारायण पाण्डेय : जय हनुमान्

यहाँ भय स्थायी भाव है। लंका की सेना आश्रय एवं हनुमान् आलम्बन हैं। गर्जन-रव और भीषण-दर्शन उद्दीपन हैं। काँपना, त्राहि-त्राहि पुकारना आदि अनुभाव हैं। शंका, चिन्ता, सन्त्रास आदि संचारी भाव हैं। इनसे पुष्ट भय स्थायी भाव भयानक रस को प्राप्त हुआ है।

(7) वीभत्स रस

विभाव, अनुभाव और संचारी भाव के संयोग से जुगुप्सा (घृणा) स्थायी भाव वीभत्स रस का रूप ग्रहण करता है। उदाहरण—

कोउ अँतड़िनि की पहिरि माल इतरात दिखावत।
कोउ चरबी लै चोप सहित निज अंगनि लावत।।
कोउ मुंडनि लै मानि मोद कंदुक लौं डारत।
कोउ रुंडनि पै बैठि करेजौ फारि निकारत।।

–रत्नाकर : हरिश्चन्द्र

उपर्युक्त पद में जुगुप्सा स्थायी भाव है। श्मशान का दृश्य आलम्बन है। अँतड़ी की माला पहनकर इतराना, चोप सहित शरीर पर चर्बी का पोतना, हाथ में मुण्डों को लेकर गेंद की तरह उछालना आदि उद्दीपन विभाव हैं। दैन्य, ग्लानि, निर्वेद आदि संचारी भाव हैं। इन सबसे पुष्ट जुगुप्सा स्थायी भाव वीभत्स रस दशा को प्राप्त हुआ है।

(8) अद्भुत रस

विभाव, अनुभाव और संचारी भाव के संयोग से विस्मय नामक स्थायी भाव अद्भुत रस की दशा को प्राप्त होता है। विविध प्रकरणों में लोकोत्तरता देखकर जो आश्चर्य होता है, उसे विस्मय कहते हैं। उदाहरण—

इहाँ उहाँ दुइ बालक देखा। मति भ्रम मोरि कि आन बिसेखा।।
तन पुलकित मुख वचन न आवा। नयन मूँदि चरनन सिर नावा।।

–तुलसी : रामचरितमानस

यहाँ विस्मय स्थायी भाव है। माता कौशल्या आश्रय तथा यहाँ-वहाँ दो बालक दिखायी देना आलम्बन है। 'तन पुलकित मुख वचन न' में रोमांच और स्वरभंग अनुभाव हैं। जड़ता, वितर्क आदि संचारी हैं, अत: यहाँ अद्भुत रस है।

(9) शान्त रस

विभाव, अनुभाव और संचारी भाव के संयोग से निर्वेद नामक स्थायी भाव शान्त रस का रूप ग्रहण करता है। उदाहरण—

अबलौं नसानी अब न नसैहौं।
राम कृपा भव निसा सिरानी जागे फिर न डसैहौं।
पायो नाम चारु चिंतामनि उर करतें न खसैहौं।
श्याम रूप सुचि रुचिर कसौटी चित कंचनहिं कसैहौं।
परबस जानि हँस्यो इन इन्द्रिन निज बस ह्वै न हँसैहौं।
मन मधुकर पन करि तुलसी रघुपति पद कमल बसैहौं।

–तुलसी : विनयपत्रिका

यह निर्वेद स्थायी भाव है। सांसारिक असारता और इन्द्रियों द्वारा उपहास उद्दीपन हैं। स्वतन्त्र होने तथा राम के चरणों में रति होने का कथन अनुभाव है। धृति, वितर्क, मति आदि संचारी हैं। इन सबसे पुष्ट निर्वेद शान्त रस को प्राप्त हुआ है।

(10) वात्सल्य (वत्सल) रस

वात्सल्य नामक स्थायी भाव, विभाव, अनुभाव और संचारी भाव के संयोग से 'वात्सल्य रस' सम्पुष्ट होता है।

उदाहरण—

जसोदा हरि पालने झुलावैं।
हररावैं दुलरावैं मल्हावैं, जोइ सोइ कछु गावैं।
मेरे लाल को आव री निंदरिया, काहे न आन सुवावैं।
तू काहैं नहीं बेगहिं आवै तोकौं कान्ह बुलावैं।
कबहुँ पलक हरि मूंदि लेत हैं, कबहुँ अधर फरकावैं।
सोवत जानि मौन ह्वै कै रहि, करि करि सैन बतावैं।
इहि अन्तर अकुलाइ उठे हरि, जसुमति मधुरै गावैं।
जो सुख 'सूर' अमर-मुनि दुर्लभ, सो नंद-भामिनी पावैं। **—सूर : सूरसागर**

इसमें वात्सल्य स्थायी भाव है। यशोदा आश्रय और कृष्ण आलम्बन हैं। यशोदा का गीत गाना आदि अनुभाव हैं। इन सबसे पुष्ट वात्सल्य स्थायी भाव वत्सल रस दशा को प्राप्त हुआ है।

छन्द

छन्द कविता की स्वाभाविक गति के नियम-बद्ध रूप हैं। सामान्य धारणा के अनुसार जातीय संगीत और भाषावृत्ति के आधार पर निर्मित लयादर्श की आवृत्ति को छन्द कहते हैं। छन्द में निश्चित मात्रा या वर्ण की गणना होती है। छन्द के आदि आचार्य पिंगल हैं। इसी से छन्दशास्त्र को 'पिंगलशास्त्र' भी कहते हैं।

चरण—प्रत्येक छन्द चरणों में विभाजित होता है। इनको पद या पाद कहते हैं। जिस प्रकार मनुष्य चरणों पर चलता है, उसी प्रकार कविता भी चरणों पर चलती है। एक छन्द में प्राय: चार चरण होते हैं जो सामान्यत: चार पंक्तियों में लिखे जाते हैं। किन्हीं-किन्हीं छन्दों में, जैसे—छप्पय, कुण्डलियाँ आदि में छह चरण होते हैं।

वर्ण और मात्रा—वर्णों की गणना करते समय वर्ण चाहे लघु हो अथवा गुरु, उसे एक ही माना जाता है, यथा—'रम', 'राम', 'रामा', तीनों शब्दों में दो-दो वर्ण हैं। मात्रा से अभिप्राय उच्चारण के समय की मात्रा से है। गुरु में लघु की अपेक्षा दूना समय लगता है इसलिए मात्राओं की जहाँ गणना होती है वहाँ लघु की एक मात्रा होती है और गुरु की दो मात्राएँ होती हैं। लघु का संकेत खड़ी रेखा '।' और गुरु का संकेत वक्र रेखा 'ऽ' होता है। लघु के लिए 'ल' और गुरु के लिए 'ग' के संकेतों का भी प्रयोग होता है।

गण—तीन वर्णों के लघु गुरु क्रम के अनुसार योग को गण कहते हैं।

गणों को समझने के लिए निम्न सूत्र उपयोगी है—

यमाताराजभानसलगा

इस सूत्र से आठों गणों का स्वरूप ज्ञात हो जाता है। यथा—

गण का नाम	**संकेत**	**सूत्रगत उदाहरण**	**सार्थक उदाहरण**
यगण	।ऽ ऽ	यमाता	यशोदा
मगण	ऽऽऽ	मातारा	मायावी
तगण	ऽऽ।	ताराज	तालाब
रगण	ऽ।ऽ	राजभा	रामजी
जगण	।ऽ।	जभान	जलेश
भगण	ऽ।।	भानस	भारत
नगण	।।।	नसल	नगर
सगण	।।ऽ	सलगा	सरिता

➡ सम, अर्द्धसम और विषम

जिन छन्दों के चारों चरणों की मात्राएँ या वर्ण एक से हों वे सम कहलाते हैं, जैसे चौपाई, इन्द्रवज्रा आदि। जिनमें पहले और तीसरे तथा दूसरे और चौथे चरणों की मात्राओं या वर्णों में समता हो वे अर्द्धसम कहलाते हैं, जैसे दोहा, सोरठा आदि। जिन छन्दों में चार से अधिक छह चरण और वे एक से न हों, वे विषम कहलाते हैं, जैसे—छप्पय और कुण्डलिया।

गति–पढ़ते समय कविता के स्पष्ट सुखद प्रवाह को गति कहते हैं।

यति–छन्दों में विराम या रुकने के स्थलों को यति कहते हैं।

छन्द के प्रकार

मात्रा और वर्ण के आधार पर छन्द मुख्यतया दो प्रकार के होते हैं—मात्रिक और वर्णवृत्त।

मात्रिक छन्द

मात्रिक छन्दों में केवल मात्राओं की व्यवस्था होती है, वर्णों के लघु और गुरु के क्रम का विशेष ध्यान नहीं रखा जाता। इन छन्दों के प्रत्येक चरण में मात्राओं की संख्या नियत रहती है। मात्रिक छन्द तीन प्रकार के होते हैं—सम, अर्द्धसम और विषम।

(1) चौपाई

चौपाई सम मात्रिक छन्द है। इसमें चार चरण होते हैं और प्रत्येक चरण में 16 मात्राएँ होती हैं। अन्त में जगण और तगण के प्रयोग का निषेध है।

उदाहरण—

I I I S I S II IISS
निरखि सिद्ध साधक अनुरागे।
सहज सनेहु सराहन लागे॥
होत न भूतल भाउ भरत को।
अचर सचर चर अचर करत को॥ **–तुलसी : रामचरितमानस**

इस छन्द के प्रत्येक चरण में 16-16 मात्राएँ हैं, अतः यह चौपाई छन्द है।

(2) दोहा

यह अर्द्धसम मात्रिक छन्द है। इसमें चार चरण होते हैं। इसके पहले और तीसरे चरण में 13-13 मात्राएँ तथा दूसरे और चौथे चरण में 11-11 मात्राएँ होती हैं। इसके विषम चरणों के आदि में जगण नहीं होना चाहिए तथा सम चरणों के अन्त में गुरु लघु होना चाहिए। **उदाहरण—**

I I I S I I I S I S S I S I I I S I
लसत मंजु मुनि मंडली, मध्य सीय रघुचंदु।
ग्यान सभां जनु तनु धरें भगति सच्चिदानन्दु॥ **–तुलसी : रामचरितमानस**

इस पद्य के पहले और तीसरे चरण में 13-13 मात्राएँ हैं और दूसरे तथा चौथे चरण में 11-11 मात्राएँ हैं, अतः यह दोहा छन्द है।

(3) सोरठा

यह अर्द्धसम मात्रिक छन्द है। इसके प्रथम और तृतीय चरण में 11-11 मात्राएँ तथा द्वितीय एवं चतुर्थ चरण में

13-13 मात्राएँ होती हैं। पहले और तीसरे चरण के अन्त में गुरु लघु आते हैं और कहीं-कहीं तुक भी मिलती है। यह दोहा का उलटा होता है। **उदाहरण—**

ऽ। ।ऽ।। ऽ। ।।। ।।। ऽ। । ।।।

नील सरोरुह स्याम तरुन अरुन बारिज नयन
करउ सो मम उर धाम, सदा छीरसागर सयन॥ –तुलसी : रामचरितमानस

इस पद्य के प्रथम और तृतीय चरण में 11-11 तथा द्वितीय और चतुर्थ चरण में 13-13 मात्राएँ हैं, अतः यह छन्द सोरठा है।

(4) रोला

यह सम मात्रिक छन्द है। इसमें चार चरण होते हैं और प्रत्येक चरण में 24 मात्राएँ होती हैं। 11 और 13 मात्राओं पर यति होती है। **उदाहरण—**

। । ऽ ।। ऽ ऽ। ऽ । ।। ।।।। ऽ। ।

कोउ पापिह पंचत्व प्राप्त सुनि जमगन धावत।
बनि बनि बावन वीर बढ़त चौचंद मचावत।
पै तकि ताकी लोथ त्रिपथगा के तट लावत।
नौ द्वै, ग्यारह होत तीन पाँचहिं बिसरावत॥ –भारतेन्दु : गंगावतरण

इसके प्रत्येक चरण में 24 मात्राएँ हैं। 11-13 पर यति है, अतः यह छन्द रोला है।

(5) कुण्डलिया

यह विषम मात्रिक छन्द है। इसमें छह चरण होते हैं और प्रत्येक चरण में 24 मात्राएँ होती हैं। आदि में एक दोहा और बाद में एक रोला जोड़ कर कुण्डलिया छन्द बनता है। ये दोनों छन्द मानो कुण्डली रूप में एक दूसरे से गुंथे रहते हैं, इसलिए इसे कुण्डलिया छन्द कहते हैं। जिस शब्द से इस छन्द का प्रारम्भ होता है उसी से इसका अन्त भी होता है। दोहे का चौथा चरण रोला के प्रथम चरण का भाग होकर आता है। **उदाहरण—**

ऽ ऽ ऽ। । ऽ । ऽ ।। ऽ । । । । ऽ ।

साईं बैर न कीजिए गुरु पण्डित कवि यार।
बेटा बनिता पौरिया यज्ञ करावन हार।
यज्ञ करावनहार राजमंत्री जो होई।
विप्र पड़ोसी वैद्य आपुको तपै रसोई।
कह गिरिधर कविराय जुगन सों यह चलि आई।
इन तेरह को तरह दिये बनि आवै साई।

इस पद्य के प्रथम एवं द्वितीय चरण दोहा हैं तथा आगे के चार चरण रोला हैं। दोनों के कुण्डलित होने से कुण्डलिया छन्द का निर्माण हुआ है।

(6) हरिगीतिका

यह सम मात्रिक छन्द है। इसमें चार चरण होते हैं। इसके प्रत्येक चरण में 28 मात्राएँ होती हैं। 16 और 12 मात्राओं पर यति होती है। प्रत्येक चरण के अन्त में रगण (ऽ । ऽ) आना आवश्यक है। **उदाहरण—**

। । ऽ। ऽ ऽ ऽ । ऽ । । । । । ऽ ऽ ऽ । ऽ

खग-वृन्द सोता है अतः कल कल नहीं होता वहाँ।
बस मंद मारुत का गमन ही मौन है खोता जहाँ।

इस भाँति धीरे से परस्पर कह सजगता की कथा।
यों दीखते हैं वृक्ष ये हो विश्व के प्रहरी यथा।

–हरिऔध : प्रियप्रवास

इसके प्रत्येक चरण में 28 मात्राएँ हैं, अतः यह हरिगीतिका छन्द है।

(7) बरवै

यह अर्द्धसम मात्रिक छन्द है। इसके प्रथम एवं तृतीय चरण में 12-12 मात्राएँ तथा द्वितीय एवं चतुर्थ चरण में 7-7 मात्राएँ होती हैं। सम चरणों के अन्त में जगण (। ऽ ।) होता है। **उदाहरण**—

ऽ ।। ।। ऽ ।। । । । । । । ऽ ।
चम्पक हरवा अँग मिलि, अधिक सुहाय।
जानि परै सिय हियरे, जब कुँभिलाय।

–तुलसी : बरवै रामायण

वर्ण-वृत्त छन्द

जिन छन्दों की रचना वर्णों की गणना के आधार पर की जाती है, उन्हें वर्ण-वृत्त या वर्णिक छन्द कहते हैं।

वर्ण-वृत्तों के तीन मुख्य भेद हैं—सम, अर्द्धसम, विषम।

(1) इन्द्रवज्रा

यह सम वर्ण-वृत्त है। इसके प्रत्येक चरण में 11 वर्ण त त ज ग ग अर्थात् दो तगण, एक जगण और दो गुरु के क्रम से रहते हैं।

उदाहरण–

त त ज ग ग
ऽ ऽ । ऽ ऽ । । ऽ । ऽ ऽ
मैं जो नया ग्रंथ विलोकता हूँ,
भाता मुझे सो नव मित्र सा है।
देखूँ उसे मैं नित नेम से ही,
मानो मिला मित्र मुझे पुराना।

–हरिऔध

उपर्युक्त पद्य के प्रत्येक चरण में दो तगण, एक जगण और दो गुरु के क्रम से 11 वर्ण हैं, अतः यह छन्द इन्द्रवज्रा है।

(2) उपेन्द्रवज्रा

यह सम वर्ण-वृत्त है। इसके प्रत्येक चरण में 'ज त ज ग ग' अर्थात् जगण तगण जगण और दो गुरु के क्रम से 11 वर्ण होते हैं। **उदाहरण**—

ज त ज ग ग
। ऽ । ऽ ऽ । । ऽ । ऽ ऽ
बड़ा कि छोटा कुछ काम कीजै
परन्तु पूर्वापर सोच लीजै।
बिना विचारे यदि काम होगा,
कभी न अच्छा परिणाम होगा।

–हरिऔध

इस पद्य के प्रत्येक चरण में जगण, तगण, जगण और दो गुरु के क्रम से 11 वर्ण हैं, अतः यह छन्द उपेन्द्रवज्रा है।

(3) वसन्ततिलका

यह सम वर्ण-वृत्त है। इसके प्रत्येक चरण में 'त भ ज ज ग ग' अर्थात् तगण, भगण, दो जगण और दो गुरु के क्रम से चौदह वर्ण होते हैं। **उदाहरण–**

त भ ज ज ग ग
ऽ ऽ। ऽ।। ।ऽ। ।ऽ। ऽ ऽ
जो राजपंथ वन-भूतल में बना था,
धीरे उसी पर सधा रथ जा रहा था।
हो हो विमुग्ध रुचि से अवलोकते थे,
ऊधो छटा विपिन की अति ही अनूठी।

–हरिऔध : प्रियप्रवास

इस छन्द के प्रत्येक चरण में तगण, भगण, दो जगण और दो गुरु के क्रम से 14 वर्ण हैं, अतः यह वसन्ततिलका छन्द है।

(4) सवैया

22 से 26 तक के वर्ण-वृत्त सवैया कहलाते हैं। मत्तगयंद, सुन्दरी, सुमुखी आदि इसके कुछ प्रमुख भेद हैं।

(5) मत्तगयंद (सवैया)

यह सम वर्ण-वृत्त है। इसके प्रत्येक चरण में 7 भगण और दो गुरु के क्रम से 23 वर्ण होते हैं। **उदाहरण—**

भ भ भ भ भ भ भ ग ग
ऽ। ।ऽ ।।ऽ। ।ऽ। ।ऽ।। ऽ।। ऽ। ।ऽऽ
सीस जटा, उर-बाहु बिसाल बिलोचन लाल तिरीछी सी भौंहैं।
तून सरासन-बान धरें तुलसी बन मारग में सुठि सोहैं।
सादर बारहिं बार सुभाय चितै तुम्ह त्यों हमरो मनु मोहैं।
पूँछति ग्राम वधू सिय सों, कहौ सांवरे से सखि रावरे को हैं।

–तुलसी : कवितावली

इस पद्य में 7 भगण और दो गुरु के क्रम से 23 वर्ण हैं। अतः यह मत्तगयंद सवैया छन्द है। इसके प्रथम चरण के अन्त में 'छी सी' का लघु उच्चारण 'छि सि' होगा।

(6) सुन्दरी (सवैया)

यह सम वर्ण-वृत्त है। इसके प्रत्येक चरण में आठ सगण और एक गुरु वर्ण के क्रम से 25 वर्ण होते हैं। **उदाहरण—**

स स स स स स स स ग
।। ऽ।। ऽ।। ऽ।। ऽ ।। ऽ।। ।ऽ ।। ऽ ।।ऽऽ
भुव भारहि संयुत राकस को गन जाय रसातल मैं अनुराग्यौ।
जग में जय शब्द समेतहिं 'केसव' राज विभीषन के सिर जाग्यौ।
मय-दानव नंदिनी के सुख सों मिलि कै सिव के हिय के दुख भाग्यौ।
सुर दुंदुभि सीस गजा सर राम को रावन के सिर साथहि लाग्यौ।

–केशव : रामचन्द्रिका

नोट—26 से अधिक वर्णों वाले छन्द दण्डक कहलाते हैं।

(7) सुमुखी (सवैया)

इसमें चार चरण होते हैं। प्रत्येक चरण में 23 वर्ण होते हैं। सात जगण (। ऽ ।) और अन्त में एक लघु और एक गुरु होते हैं। इसे **मल्लिका छन्द** भी कहते हैं। **उदाहरण—**

ज ज ज ज ज ज ज

। ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ । । ऽ

जु लोग लगैं सिय रामहि साथ चलै वन माहि फिरैन चहैं।
हमें प्रभु आयुसु, देहु चलैं रउरे यों करि जोरि कहैं।
चलें कछु दूरि नमै पगधूरि भले फल जन्म अनेक लहैं।
सिया सुमुखी हरि फेरि तिन्हे बहु भाँतिनि ते समुझाइ रहैं।

(8) मनहर कवित्त

यह दण्ड वृत्त है। इसके प्रत्येक चरण में 31 वर्ण होते हैं। 16-15 वर्णों पर यति होती है। अन्त में एक गुरु वर्ण होता है। **उदाहरण—**

मैं निज अलिन्द में खड़ी थी सखि, एक रात,
रिमझिम बूँदें पड़ती थीं घटा छाई थी।
गमक रहा था केतकी का गन्ध चारों ओर,
झिल्ली झनकार यही मेरे मन भाई थी।
करने लगी मैं अनुकरण स्वनूपुरों से,
चंचला थी चमकी, घनाली घहराई थी।
चौंक देखा मैंने चुप कोने में खड़े थे प्रिय,
माई! मुख लज्जा उसी छाती में छिपी थी।

–मैथिलीशरण गुप्त : साकेत

इसके प्रत्येक चरण में 31 वर्ण हैं और 16 तथा 15 पर यति है। यह मनहर कवित्त है। इसे मनहरण कवित्त भी कहते हैं।

अलंकार

काव्य की शोभा बढ़ानेवाले तत्त्वों को अलंकार कहते हैं। अलंकार के मुख्य दो भेद हैं—शब्दालंकार और अर्थालंकार। जहाँ शब्दों के कारण चमत्कार आ जाता है वहाँ शब्दालंकार तथा जहाँ अर्थ के कारण रमणीयता आ जाती है वहाँ अर्थालंकार होता है।

शब्दालंकार

अनुप्रास, यमक और श्लेष शब्दालंकार हैं।

(1) अनुप्रास

जहाँ व्यंजनों की बार-बार आवृत्ति हो, चाहे उनके स्वर मिलें या न मिलें वहाँ अनुप्रास अलंकार होता है। अनुप्रास के पाँच भेद होते हैं–

(1) छेकानुप्रास, (2) वृत्त्यनुप्रास, (3) श्रुत्यनुप्रास, (4) लाटानुप्रास, (5) अन्त्यानुप्रास।

छेकानुप्रास—जहाँ एक या अनेक वर्णों की आवृत्ति केवल एक बार होती है वहाँ छेकानुप्रास होता है।

राधा के बर बैन सुनि चीनी चकित सुभाइ।
दाख दुखी मिसरी मुई सुधा रही सकुचाइ।

यहाँ ब, च, द, म और स वर्णों की एक एक बार आवृत्ति हुई है, अतः छेकानुप्रास है।

वृत्त्यनुप्रास—जहाँ एक अथवा अनेक वर्णों की आवृत्ति दो या दो से अधिक बार हो, वहाँ वृत्त्यनुप्रास होता है।

तरनि-तनूजा तट तमाल तरुवर बहु छाये।

यहाँ 'त' वर्ण की अनेक बार आवृत्ति होने के कारण वृत्त्यनुप्रास है।

श्रुत्त्यनुप्रास—जहाँ कण्ठ-तालु आदि एक स्थान से बोले जाने वाले वर्णों की आवृत्ति होती है, वहाँ श्रुत्त्यनुप्रास होता है।

तुलसीदास सीदत निसिदिन देखत तुम्हारि निठुराई।

इसमें दन्त्य वर्णों त, स, र, न की आवृत्ति हुई है, अतः इसमें श्रुत्त्यनुप्रास है।

लाटानुप्रास—जब शब्द और उसका अर्थ वही रहे, केवल अन्वय करने से अर्थ में भेद हो जाय, उसे लाटानुप्रास कहते हैं।

तीरथ-व्रत-साधन कहा, जो निस दिन हरिगान।
तीरथ-व्रत-साधन कहा, बिन निस दिन हरिगान।

इसमें शब्द और अर्थ वही है, परन्तु अन्वय करने से अर्थ में भिन्नता आ जाने के कारण लाटानुप्रास है।

विशेष—लाट प्रदेश के कवियों द्वारा खोजे और फिर प्रचलित किये जाने के कारण यह अलंकार लाटानुप्रास कहलाता है। गुजरात में भड़ौच और अहमदाबाद के पास यह प्रदेश था।

अन्त्यानुप्रास—जहाँ चरण या पद के अन्त में स्वर या व्यंजन की समानता होती है, वहाँ अन्त्यानुप्रास होता है।

गुरु पद रज मृदु मंजुल अंजन।
नयन अमिय दृग दोष विभंजन।।

इसमें अन्त में न वर्ण की समानता के कारण अन्त्यानुप्रास है।

(2) यमक

जहाँ भिन्न-भिन्न अर्थों वाले शब्दों की आवृत्ति हो वहाँ यमक अलंकार होता है।

इकली डरी हौं, घन देखि के डरी हौं,
खाय बिस की डरी हौं घनस्याम मरि जाइ हौं।

ऊपर के पद में 'डरी' तीन बार आया है—अर्थ भिन्न-भिन्न हैं। पहली डरी का अर्थ पड़ी है, दूसरी डरी का अर्थ 'भयभीत' है तथा तीसरी डरी का अर्थ विष की डली या टुकड़ी है।

(3) श्लेष

जहाँ एक शब्द का एक ही बार प्रयोग होता है और उसके एक से अधिक अर्थ होते हैं, वहाँ श्लेषालंकार होता है।

चिरजीवो जोरी जुरे क्यों न सनेह गँभीर।
को घटि ए वृषभानुजा ए हलधर के वीर।।

यहाँ वृषभानुजा दो अर्थों में प्रयुक्त है, पहला वृषभानु की पुत्री राधा, दूसरा वृषभ की अनुजा गाय।

इसी प्रकार 'हलधर के वीर' के भी दो अर्थ हैं—(1) हलधर अर्थात् बलराम के कृष्ण तथा (2) हलधर को धारण करने वाले बैल के भाई बैल। 'वृषभानुजा' तथा 'हलधर' के एक से अधिक अर्थ होने के कारण यहाँ श्लेष अलंकार है।

अर्थालंकार

(1) उपमा

समान धर्म के आधार पर जहाँ एक वस्तु की समानता या तुलना किसी दूसरे वस्तु से की जाती है वहाँ उपमा अलंकार माना जाता है। इसके चार अंग हैं—

(1) **उपमेय**—जिसकी उपमा दी जाय अर्थात् वह वर्ण्य विषय, जिसके लिए उपमा की योजना की जाती है, उसे उपमेय कहते हैं।

(2) **उपमान**—जिससे उपमा दी जाये वह उपमान होता है।

(3) **साधारण धर्म**—उपमेय एवं उपमान के बीच जो भाव, रूप, गुण, क्रिया आदि समान धर्म हो, उसे साधारण धर्म कहते हैं।

(4) **वाचक**—उपमेय और उपमान की समानता को प्रकट करने वाले—सा, इव, सम, समान, सों आदि शब्दों को वाचक कहते हैं।

उदाहरणार्थ–

हरिपद कोमल कमल से।

इस एक पंक्ति में उपमा के चारों अंग उपस्थित हैं। हरिपद का वर्णन किया जा रहा है, वे उपमेय हैं। उनकी समता कमल से की गयी है, अतः कमल उपमान है। कोमलता वाले गुण में ही दोनों के बीच समानता दिखायी गयी है, अतः यह साधारण धर्म है तथा 'से' शब्द वाचक है। इस पंक्ति में पूर्णोपमा है क्योंकि इसमें चारों अंग हैं। जहाँ उपमा के चारों अंगों में से कोई अंग लुप्त रहता है, वहाँ लुप्तोपमा होती है।

उपमेय लुप्तोपमा—जहाँ केवल उपमेय लुप्त हो, वहाँ उपमेय लुप्तोपमा अलंकार होता है। यथा—

साँवरे गोरे घन छटा से फिरैं मिथिलेस की बाग थली में।

उपमान लुप्तोपमा—जहाँ उपमान का लोप हो वहाँ उपमान लुप्तोपमा अलंकार होता है। यथा—

सुन्दर नन्द किसोर सो, जग में मिलै न और।

साधारण-धर्म लुप्तोपमा—जहाँ साधारण धर्म का लोप हो वहाँ धर्म लुप्तोपमा अलंकार होगा। यथा—

कुन्द इन्दु सम देह उमा रमन करुना अयन।

वाचक लुप्तोपमा—जहाँ वाचक शब्द का लोप हो वहाँ वाचक लुप्तोपमा अलंकार होता है। जैसे–

नील सरोरुह स्याम तरुन अरुन बारिज नयन।

जहाँ उपमेय का उत्कर्ष दिखाने के हेतु अनेक उपमान एकत्र किये जायँ वहाँ मालोपमा अलंकार होता है। जैसे–

इन्द्र जिमि जम्भ पर बाड़व सुअंभ पर,
रावण सदम्भ पर रघुकुल राज हैं।

(2) रूपक

जहाँ उपमेय में उपमान का आरोप हो वहाँ रूपक अलंकार होता है।

(1) **सांगरूपक**—जहाँ उपमेय पर उपमान का सर्वांग आरोप हो, वहाँ सांगरूपक होता है।

उदित उदय गिरि मंच पर रघुवर बाल पतंग।
बिगसे सन्त सरोज सब हरखे लोचन भृंग॥

यहाँ रघुवर, मंच, संत, लोचन आदि उपमेयों पर बाल सूर्य, उदयगिरि, सरोज तथा भृंग आदि उपमानों का आरोप किया गया है, अतः यहाँ सांगरूपक है।

(2) **निरंग रूपक**—जहाँ उपमेय पर उपमान का आरोप सर्वांग न हो वहाँ निरंग रूपक होता है।

अवसि चलिय बन राम पहुं भरत मंत्र भल कीन्ह।
सोक सिन्धु बूड़त सबहिं, तुम अवलम्बन दीन्ह।।

यहाँ सिन्धु उपमान का शोक उपमेय में आरोप मात्र है, अतः निरंग रूपक है।

(3) **परम्परित रूपक**—जहाँ मुख्य रूपक किसी दूसरे रूपक पर अवलम्बित हो या जहाँ एक आरोप दूसरे का कारण बनता हुआ दिखाया जाय वहाँ परम्परित रूपक होता है।

बन्दौं पवन कुमार खल बन पावक ज्ञान घन।
जासु हृदय आगार बसहिं राम सरचाप धर।।

यहाँ हनुमान् में जो अग्नि का आरोप प्रदर्शित किया गया है, उसका कारण खलों में वन का आरोप है, अतः इस आरोप पर ही प्रथम आरोप अवलम्बित है।

(3) अनन्वय

जहाँ उपमान के अभाव में उपमेय ही को उपमान मान लिया जाय वहाँ अनन्वय अलंकार होता है।

राम से राम सिया सी सिया
सिर मौर बिरंचि बिचारि सँवारे।

(4) प्रतीप

जहाँ प्रसिद्ध उपमान को उपमेय बना दिया जाय अथवा उसकी व्यर्थता प्रदर्शित की जाय वहाँ प्रतीप अलंकार होता है। जैसे साँवले रंग के शरीर का प्रसिद्ध उपमान यमुना जल है। तुलसीदासजी ने भगवान् राम के वनवास जाते समय मार्ग में यमुना स्नान करने के प्रसंग में इस अलंकार का प्रयोग किया है–

उतरि नहाये जमुन जल जो सरीर सम स्याम।

राम उस जमुना-जल में नहाये जो उनके शरीर के समान साँवले रंग का है। इस प्रकार उपमेय को उपमान बना दिया और उपमान को उपमेय। प्रतीप का अर्थ ही उल्टा होता है।

जगप्रकाश तुव जस करै बृथा भानु यह देख।

यहाँ पर भी प्रसिद्ध उपमान सूर्य की व्यर्थता प्रतिपादित कर देने से प्रतीप अलंकार है।

(5) सन्देह

जहाँ किसी वस्तु की समानता अन्य वस्तु से दिखायी पड़ने से यह निश्चित न हो पाये कि यह वस्तु वही है या कोई अन्य, वहाँ सन्देह अलंकार होता है।

लंका-दहन के वर्णन में हनुमान् की पूँछ को देखकर यह निश्चित ज्ञान नहीं हो पाता कि यह आकाश में अनेक पुच्छल तारे हैं या पर्वत से अग्नि की नदी सी निकल रही है—

कैधौं व्योम बीथिका भरे हैं भूरि धूमकेतु
कैधौं चली मेरु तैं कृसानुसारि भारी है।

सन्देह अलंकार का एक और उदाहरण—

नारी बीच सारी है कि सारी बीच नारी है
कि सारी ही की नारी है कि नारी ही की सारी है।

(6) भ्रान्तिमान

सन्देह में तो यह संदेह बना रहता है कि यह वस्तु रस्सी है या सर्प है, परन्तु भ्रान्तिमान में तो अत्यन्त समानता के कारण एक वस्तु को दूसरी समझ लिया जाता है और उसी भूल के अनुसार कार्य भी कर डाला जाता है। यथा—

बिल बिचारि प्रविसन लग्यौ नाग शुंड में ब्याल।
ताहू कारी ऊख भ्रम लियो उठाय उत्ताल।।

यहाँ सर्प को हाथी की सूँड़ में बिल होने की भ्रान्ति हुई और वह उसी भूल के अनुसार क्रिया भी कर बैठा, उसमें घुसने लगा। उधर हाथी को भी सर्प में काले गन्ने की भ्रान्ति हुई और उसने तत्काल उसे गन्ना समझ कर उठा लिया।

(7) उत्प्रेक्षा

जहाँ उपमेय में उपमान की सम्भावना की जाय वहाँ उत्प्रेक्षा अलंकार होता है। इसके तीन भेद हैं—

1. वस्तूत्प्रेक्षा 2. हेतूत्प्रेक्षा 3. फलोत्प्रेक्षा।

(1) वस्तूत्प्रेक्षा—जहाँ किसी वस्तु में किसी अन्य वस्तु की सम्भावना की जाती है वहाँ वस्तूत्प्रेक्षा होती है। यथा—

सखि सोहति गोपाल के उर गुंजन की माल।
बाहिर लसति मनो पिये दावानल की ज्वाल॥

गुंजन की माल उपमेय में दावानल ज्वाल उपमान की सम्भावना की गयी है।

(2) हेतूत्प्रेक्षा—जहाँ अहेतु में अर्थात् जो कारण न हो, उसमें हेतु की सम्भावना की जाय, वहाँ हेतूत्प्रेक्षा होती है। यथा—

रवि अभाव लखि रैनि में दिन लखि चन्द्र विहीन।
सतत उदित इहिं हेतु जन यश प्रताप मुख कीन॥

राजा के यश प्रताप के सतत देदीप्यमान होने का हेतु रात्रि में सूर्य का और दिन में चन्द्र का अभाव बताया गया है, अतः अहेतु में हेतु की सम्भावना की गयी है।

(3) फलोत्प्रेक्षा—जहाँ अफल में फल की सम्भावना की गयी हो, वहाँ फलोत्प्रेक्षा होती है। यथा—

तरनि तनूजा तट तमाल तरुवर बहु छाये।
झुके कूल सों जल परसन हित मनहुँ सुहाये॥

यहाँ तमालों को झुके हुए होने का पवित्र जमुना जल स्पर्श का पुण्यलाभ प्राप्त करना फल या उद्देश्य बताया गया है। यहाँ अफल को फल मान लेने के कारण फलोत्प्रेक्षा है।

(8) दृष्टान्त

जहाँ उपमेय व उपमान के साधारण धर्म में भिन्नता होते हुए भी बिम्ब-प्रतिबिम्ब भाव से कथन किया जाय वहाँ दृष्टान्त अलंकार होता है।

दुसह दुराज प्रजान को क्यों न बड़ै दुख द्वन्द्व।
अधिक अँधेरो जग करत मिलि मावस रवि चन्द॥

(9) अतिशयोक्ति

जहाँ किसी वस्तु की इतनी अधिक प्रशंसा की जाय कि लोकमर्यादा का अतिक्रमण हो जाय, वहाँ अतिशयोक्ति अलंकार होता है।

अब जीवन की है कपि आस न कोय।
कनगुरिया की मदुरी कँगना होय॥

यहाँ शरीर की क्षीणता को व्यंजित करने के लिए अँगूठी को कंगन होना बताया गया है, अतः यहाँ अतिशयोक्ति अलंकार है।

॥ बहुविकल्पीय प्रश्न ॥

1. 'सिर पर बैठो काग, आँखि दोउ खात निकारत, उक्त पद में प्रयुक्त रस का नाम है—
(i) वात्सल्य (ii) हास्य (iii) शान्त (iv) वीभत्स

2. भयानक रस का स्थायी भाव है—
(i) निर्वेद (ii) वत्सलता (iii) भय (iv) रति

3. आचार्यों ने संचारी भावों की संख्या निश्चित की है—
(i) 33 (ii) 34 (iii) 35 (iv) 36

4. 'जुगुप्सा' स्थायी भाव है—
(i) रौद्र रस का (ii) वीभत्स रस का (iii) भयानक रस का (iv) अद्‌भुत रस का

5. 'श्याम और सुन्दर दोउ जोरी। निरखति छवि जननी तृनतोरी।' उक्त पद में कौन-सा रस है?
(i) शान्त रस (ii) वत्सल रस (iii) शृंगार रस (iv) करुण रस

6. 'कहूँ हाड परौ, कहूँ जरो अधजरो माँस, कहूँ गीध भीर नोचत अरी अहै।' उक्त पद में कौन-सा रस है?
(i) हास्य (ii) वीभत्स (iii) भयानक (iv) रौद्र

7. फहरी ध्वजा, फड़कीं भुजा, बलिदान की ज्वाला उठी।
निज मातृभूमि के मन में, चढ़ मुण्ड की माला उठी।।
उपर्युक्त पद में कौन-सा रस है?
(i) शृंगार (ii) वीर (iii) शान्त (iv) अद्‌भुत

8. हास्य रस का स्थायी भाव है—
(i) हास (ii) भय (iii) जुगुप्सा (iv) रति

9. शृंगार रस का स्थायी भाव है—
(i) विस्मय (ii) उत्साह (iii) रति (iv) हास

10. अर्ध राति गइ कपि नहिं आयउ। राम उठाय अनुज उर लायउ।।
सकहु न दुखित देखि मोहिं काऊ। बन्धु सदा तव मृदुल सुभाऊ।।
जौ जनतेऊँ बन बंधु बिछोहू। पिता बचन मनतेऊँ नहिं ओहू।।
उपर्युक्त पंक्तियों में कौन-सा रस है?
(i) अद्‌भुत (ii) करुण (iii) वीर (iv) शान्त

11. वीभत्स रस का स्थायी भाव है—
(i) उत्साह (ii) निर्वेद (iii) जुगुप्सा (iv) रति

12. 'इहाँ उहाँ दुइ बालक देखा, मति भ्रम मोर कि आन बिसेखा' पद प्रयुक्त रस है—
(i) शृंगार (ii) अद्‌भुत (iii) भक्ति (iv) शान्त

13. 'ओचिन्ता की पहली रेखा, अरे विश्व वनकी व्याली' में अलंकार है—
(i) यमक (ii) रूपक (iii) श्लेष (iv) प्रतीष

14. जहाँ उपमेय व उपमान के साधारण धर्म में भिन्नता होते हुए भी बिम्ब-प्रतिबिम्ब भाव से कथन किया जाए, वहाँ अलंकार होता है—
(i) उत्प्रेक्षा (ii) सन्देह (iii) दृष्टान्त (iv) अतिशयोक्ति

15. 'विदग्ध होके कण धूलि राशि का, तपे हुए लौह कणों समान था।' उक्त पद में अलंकार है—
(i) अनुप्रास (ii) यमक (iii) श्लेष (iv) उपमा

16. "वर्ण्य विषय को बहुत उत्कृष्ट दिखाने के क्रम में, उसके समान कोई अन्य है ही नहीं सूचित करने के लिए उपमेय को ही उपमान बना देना", किस अलंकार का लक्षण है?
(i) प्रतीप (ii) भ्रान्तिमान (iii) अनन्वय (iv) सन्देह

17. "जनक वचन छूये बिखा लजारु के से, वीर रहे सकल सकुचि सिखाय के।" उक्त पद में अलंकार है—
(i) अनुप्रास (ii) यमक (iii) श्लेष (iv) उपमा

18. जहाँ उपमेय को उपमान और उपमान को उपमेय बना दिया जाय, वहाँ कौन-सा अलंकार है?
(i) प्रतीप (ii) अनन्वय (iii) भ्रान्तिमान (iv) सन्देह

19. कनक-कनक तैं सौ गुनी, मादकता अधिकाइ।
उहिं खाएं बौराइ, इहिं पाएं ही बौराइ।।
उपर्युक्त पद में अलंकार है—
(i) रूपक (ii) उत्प्रेक्षा (iii) यमक (iv) श्लेष

20. जहाँ उपमेय में उपमान की कल्पना या सम्भावना की जाती है, वहाँ अलंकार होता है—
(i) उपमा (ii) सन्देह (iii) उत्प्रेक्षा (iv) श्लेष

21. उस काल मारे क्रोध के तनु काँपने उसका लगा।
मानो हवा के वेग से सोता हुआ सागर जगा।।
उपर्युक्त पंक्तियों में अलंकार है—
(i) उपमा (ii) सन्देह (iii) प्रतीप (iv) उत्प्रेक्षा

22. 'बसन्ततिलका' छन्द के एक चरण में कुल कितनी मात्राएँ होती हैं—
(i) 16 (ii) 18 (iii) 28 (iv) 14

23. 'प्रिय पति वह मेरा, प्राण प्यारा कहाँ है? दुःख जलधि निमग्ना का सहारा कहाँ है।' में प्रयुक्त छन्द है—
(i) मालिनी (ii) बसन्ततिलका (iii) इन्द्रवज्रा (iv) उपेन्द्रवज्रा

24. 'हरिगीतिका' छन्द के प्रत्येक चरण में कितनी मात्राएँ होती हैं?
(i) 24 (ii) 28 (iii) 22 (iv) 26

25. 'सकल मलिन मन दीन दुखारी। देखी सासु आन अनुसारी।" में छन्द है—
(i) रोला (ii) सोरठा (iii) दोहा (iv) चौपाई

26. 'रोला' छन्द के एक चरण में कुल कितनी मात्राएँ होती हैं—
(i) 22 (ii) 24 (iii) 26 (iv) 28

27. 'चम्पक हरवा अंग मिलि, अधिक सुहाय।
जानि परै सिय हियरै, जब कुँभिलाय।।
उक्त में छन्द है—
(i) सोरठा (ii) रोला (iii) हरिगीतिका (iv) बरवै

●●●

पत्र-लेखन

अपनी बात को दूसरों तक पहुँचाने का प्रमुख माध्यम पत्र है। लिपि के विकास के साथ ही मानवीय भावों की लिखित अभिव्यक्ति हेतु पत्र-लेखन की विधा आरंभ हुई थी। समय के साथ-साथ पत्र-लेखन की कला में अनेक परिवर्तन हुए। वर्तमान में पत्र के अनेक आयाम सामाजिक, व्यावसायिक, शासकीय/प्रशासकीय भी विकसित हुए हैं।

पत्रों के प्रकार

पत्रों के प्रमुख भेद इस प्रकार हैं–

(i) निजी/व्यक्तिगत/घरेलू या पारिवारिक पत्र
(ii) सामाजिक पत्र
(iii) व्यापारिक या व्यावसायिक पत्र
(iv) सरकारी/शासकीय/प्रशासकीय या आधिकारिक पत्र
(v) आवेदन-पत्र
(vi) शिकायती पत्र
(vii) संपादक के नाम पत्र

उपर्युक्त श्रेणियों के अलावा जो पत्र लिखे जाते हैं उन्हें विविध पत्र की श्रेणी में रखा जाता है।

अच्छे पत्र के गुण

(i) पत्र की भाषा सरल व बोधगम्य होनी चाहिए क्योंकि इसका पाठक के मन पर बहुत प्रभाव होता है।
(ii) पत्र में प्रस्तुत विचार स्पष्ट और विनम्र होना चाहिए, जिससे उसे प्राप्त करने वाला उसे ठीक ढंग से समझ सके।
(iii) पत्र यथासंभव संक्षेप में लिखना चाहिए। इस बात का प्रयास करना चाहिए कि पत्र में कोई ऐसी बात न लिखी जाय जिससे पढ़ने वाले को अरुचि उत्पन्न हो।
(iv) पत्र लेखक और उसे पाने वाले के बीच कोई न कोई सम्बन्ध अवश्य होता है। यदि पत्र आयु और पद में बड़े किसी व्यक्ति को लिखा जा रहा हो तो उसे आदरपूर्वक, मित्रों को सौहार्दपूर्वक और अपने से छोटों को स्नेहपूर्वक लिखा जाना चाहिए।
(v) पत्र में औपचारिक अभिवादन के पश्चात् लेखक को सीधे मुख्य विषय पर आना चाहिए।

नियुक्ति आवदेन-पत्र

आवेदन-पत्र से अभिप्राय उन पत्रों से लिया जाता है, जो किसी संस्था में नौकरी प्राप्त करने हेतु आवेदक द्वारा भेजे जाते हैं। आवेदन-पत्र में निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना आवश्यक है–

1. आवेदन-पत्र की भाषा शिष्ट, किन्तु स्पष्ट होनी चाहिए।

2. नियुक्ति के पद का नाम एवं सूचना का सूत्र भी स्पष्ट होना चाहिए।
3. आवेदक की पूर्ण योग्यताओं का उल्लेख होना चाहिए।
4. शैक्षिक योग्यता के साथ-साथ कार्य अनुभव का भी उल्लेख होना चाहिए।
5. विनम्रता के साथ कर्त्तव्यनिष्ठा एवं कार्यवहन की क्षमता के आश्वासन का उल्लेख भी होना चाहिए।

(1)

किसी विद्यालय के प्रबन्धक के नाम प्रवक्ता पद पर अपनी नियुक्ति हेतु एक आवेदन-पत्र लिखिए।

अथवा **अपने जिला विद्यालय निरीक्षक को एक आवेदन-पत्र लिखिए, जिसमें स्थानीय विद्यालय के रिक्त सहायक-अध्यापक पद पर अस्थायी नियुक्ति के लिए प्रार्थना की गयी है।**

अथवा **अपने जनपद के किसी विद्यालय में शिक्षक के रूप में कार्य करने के लिए अपना आवेदन-पत्र विद्यालय प्रबन्धक को प्रस्तुत कीजिए।**

सेवा में,

प्रबन्धक
महात्मा गाँधी इन्टर कॉलेज,
मेरठ (उ0 प्र0)

महोदय,

दैनिक समाचार-पत्र आज दिनांक 13 मई, 20...... से ज्ञात हुआ है कि आपके विद्यालय में अर्थशास्त्र प्रवक्ता का पद रिक्त है। उक्त पद के लिए मैं अपना आवेदन-पत्र आपकी सेवा में प्रस्तुत कर रहा हूँ। मेरी शैक्षिक एवं अन्य योग्यताओं का विवरण निम्न प्रकार है–

कक्षा	वर्ष	श्रेणी	विषय
1. हाईस्कूल	1995	द्वितीय	हिन्दी, संस्कृत, गणित, नागरिकशास्त्र, अर्थशास्त्र
2. इण्टरमीडिएट	1997	द्वितीय	हिन्दी, संस्कृत, भूगोल, अर्थशास्त्र, अंग्रेजी
3. बी0 ए0	2000	द्वितीय	हिन्दी, संस्कृत, अर्थशास्त्र
4. एम0 ए0	2002	प्रथम	अर्थशास्त्र
5. बी0 एड0	2004	प्रथम/द्वितीय	निर्धारित विषय

मैं 2004 से एम0 पी0 इण्टर कॉलेज, जौनपुर में अर्थशास्त्र-प्रवक्ता के रूप में कार्य कर रहा हूँ, परन्तु यह पद अस्थायी है। आपसे निवेदन है कि मेरी शैक्षणिक योग्यताओं पर विचार करते हुए मुझे अपने कॉलेज में सेवा का अवसर प्रदान करने की कृपा करें। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि मैं अपने परिश्रम, कार्यक्षमता एवं अध्यापन-कार्य से अपने छात्रों को सदैव सन्तुष्ट रखूँगा और आपको किसी भी प्रकार की शिकायत का अवसर नहीं दूँगा।

दिनांक : 18-05-20.......
संलग्नक : प्रमाण-पत्रों की सत्यापित प्रतिलिपियाँ

आवेदक
रमेश सिंह
513 कीडगंज, इलाहाबाद।

(2)

किसी बैंक के प्रबन्धक को कोई व्यवसाय करने हेतु ऋण-प्राप्ति के लिए एक आवेदन-पत्र लिखिए।

अथवा **अपना कुटीर उद्योग प्रारम्भ करने हेतु किसी बैंक के प्रबन्धक को ऋण प्रदान करने हेतु एक पत्र लिखिए।**

अथवा **पंजाब नेशनल बैंक के शाखा प्रबन्धक को एक आवेदन-पत्र का प्रारूप प्रस्तुत कीजिए, जिसमें एम.बी.ए. की शिक्षा हेतु 'शिक्षा ऋण' की माँग की गई हो।**

अथवा **अपने निकटस्थ बैंक की शाखा के प्रबन्धक के नाम एक प्रार्थना-पत्र लिखिए जिसमें निजी रोजगार के लिए ऋण लेने हेतु निवेदन किया गया हो।**

सेवा में,

प्रबन्धक
पंजाब नेशनल बैंक
सिविल लाइन्स
बरेली

महोदय,

सविनय निवेदन है कि वर्ष 2009 में अवध विश्वविद्यालय से बी0 ए0 की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण करने के बाद से अब तक मुझे कहीं कोई रोजगार प्राप्त नहीं प्राप्त हो सका है। मुझे ज्ञात हुआ कि विभिन्न सरकारी ऋण-योजनाओं के अन्तर्गत आपका बैंक भी बेरोजगार युवकों को 50,000 रुपए तक की ऋण-सुविधा प्रदान कर रहा है। अतः सन्दर्भ में आवश्यक प्रपत्र आदि भरवारकर मुझे भी उक्त राशि का ऋण प्रदान करने की कृपा करें।

दिनांक : 10-05-20.......

प्रार्थी
महेश प्रसाद
गोसाईगंज, फैजाबाद।

(3)

अपने मुहल्ले की सड़कों, नालियों आदि की गन्दगी को दूर करने के लिए उपयुक्त अधिकारी को पत्र लिखिए।

अथवा **किसी हिन्दी दैनिक समाचार-पत्र के सम्पादक के नाम एक पत्र लिखिए जिसमें सड़कों की दुर्दशा की ओर सरकार का ध्यान आकर्षित किया गया हो।**

अथवा **अपने महानगर के महापौर को एक शिकायती पत्र लिखिए जिसमें मुहल्ले के चौराहों पर एकत्र गंदगी एवं कूड़े-करकट को हटाने का अनुरोध किया गया हो।**

अथवा **नगर की स्वच्छता हेतु नगरपालिका अध्यक्ष को आवेदन देते हुए उनका ध्यान गन्दगी से होने वाली बीमारियों की ओर आकृष्ट कीजिए।**

सेवा में,

अधिशासी अधिकारी
नगरपालिका, देवरिया।

महोदय,

मैं आपका ध्यान शहर में व्याप्त गन्दगी और दुर्दशा की ओर आकर्षित कराना चाहता हूँ जिन स्थानों पर नालियाँ बनाई गई हैं, वे जगह-जगह से टूट गई हैं। जहाँ नालियाँ हैं, वहाँ पर उनकी सफाई के लिए सफाई कर्मचारियों की नियुक्ति नहीं की गई है, परिणामतः पानी हर समय सड़ता रहता है।

अतः आपसे निवेदन है कि दुर्दशा को देखते हुए शहर की सड़कों की मरम्मत और गन्दे पानी के निकास की उचित व्यवस्था कराने की कृपा करें।

दिनांक : 10-05-20.......

भवदीय
निलेश कुमार
देवरिया।

निबन्ध लेखन

निबन्ध से आशय

कम लेकिन चुने हुए शब्दों में किसी विषय पर अपने विचार प्रकट करने का प्रयत्न निबन्ध कहलाता है। निबन्ध के विषय असीमित हैं। छोटे से लेकर बड़े किसी भी विषय पर निबन्ध लिखा जा सकता है।

निबन्ध की शुरुआत

निबन्ध का आरंभ इस ढंग से किया जाना चाहिए कि इसे पढ़ने वालों की जिज्ञासा शुरू से ही बढ़ जाए और वह उसे पूरा पढ़ने को विवश हो। विचारपूर्णता, मौलिकता और मनोरंजकता निबन्ध के आवश्यक गुण हैं।

निबन्ध के साधन

पत्र-पत्रिकाओं और पुस्तकों का अध्ययन निबन्ध-लेखन का प्रमुख साधन है। पर्याप्त अध्ययन और उससे अर्जित ज्ञान निबन्ध लेखन में उपयोगी होता है।

निबन्ध के अंग

निबन्ध के तीन विशिष्ट अंग होते हैं–1. प्रस्तावना, 2. प्रसार, 3. उपसंहार।

1. प्रस्तावना–निबन्ध की भूमिका प्रस्तावना में अंकित होती है। इसमें निबन्ध में वर्णित विषय का परिचय दिया होता है। प्रस्तावना में लेखक द्वारा यह स्पष्ट किया जा सकता है कि वह निबन्ध में किस विषय का वर्णन करना चाहता है।

2. प्रसार–प्रसार में निबन्ध का प्रारूप (कलेवर) रहता है। यह निबन्ध का सबसे विस्तृत व महत्त्वपूर्ण अंश शामिल होता है। निबन्ध लेखक को इसके अन्तर्गत निबन्ध-विषय के सम्बन्ध में अपनी पूरी जानकारी, संक्षिप्त, संयत तथा मनोरंजक शैली में प्रस्तुत करना होता है।

3. उपसंहार–उपसंहार निबन्ध का अंतिम भाग होता है। इसमें निबन्ध की शुरुआत से उसके अंत तक का सम्पूर्ण विवरण संक्षेप में प्रदान किया जाता है। इस तरह निबन्ध का सिंहावलोकन अंकित किया जाता है।

निबन्ध के प्रकार

निबन्ध प्रमुख रूप से तीन प्रकार के होते हैं–(1) वर्णनात्मक, (2) आख्यानात्मक तथा, (3) विचारात्मक।

(1) वर्णनात्मक निबन्ध–इस प्रकार के निबन्ध में किसी स्थान, यात्रा, घटना, दृश्य, वस्तु, पदार्थ आदि का वर्णन किया जाता है। इसमें वर्ण्य विषय से सम्बन्धित प्रमाण आदि नहीं दिए जाते बल्कि वर्ण्य विषय का वास्तविक चित्रण प्रस्तुत किया जाता है।

(2) आख्यानात्मक निबन्ध–इस तरह का निबन्ध किसी प्रख्यात व्यक्ति के व्यक्तित्व के जीवन को आधार बनाकर लिखा जाता है। इसमें व्यक्ति के शारीरिक, सामाजिक तथा आर्थिक जीवन का ही नहीं बल्कि उसके व्यक्तित्व पर भी प्रकाश डाला जाता है। इसके साथ ही व्यक्ति के गुण-दोषों पर भी प्रकाश डाला जाता है।

(3) विचारात्मक निबन्ध–विचारात्मक निबन्ध के अंतर्गत निबन्ध की रचना किसी विचार और भाव को लेकर की जाती है। दर्शनशास्त्र, राजनीतिशास्त्र, धर्म, संस्कृति, सभ्यता, विज्ञान, इतिहास आदि से सम्बन्धित विषय सम्बन्धित के अंतर्गत की जाती है।

विचारात्मक निबन्ध के दो भेद होते हैं–

(अ) भावप्रधान निबन्ध (ख) तर्कप्रधान निबन्ध

(अ) भावप्रधान निबन्ध : इस प्रकार के निबन्धों में लेखक अपने मन की भावनाओं में प्रवाहित हुआ भावनात्मक शैली में अपनी बात को प्रस्तुत करता है। लेखक अपने मन में आए हुए भावों को सत्य मानते हुए उन्हें शब्दों में पिरोता है।

(ब) तर्कप्रधान निबन्ध : इसके अन्तर्गत विचार को तर्क अथवा उचित-प्रमाणों के आधार पर सत्यापित करने का प्रयास किया जाता है। इसके अन्तर्गत कभी-कभी किसी विचार का विवेचन या विश्लेषण भी प्रस्तुत किया जाता है। इसमें किसी भाव या विचार पर वाद-विवाद भी किया जाता है। साथ ही, इसमें किसी वस्तु, विषय या रचना की आलोचना या प्रत्यालोचना भी प्रस्तुत की जाती है।

1. पर्यावरण प्रदूषण की समस्या और समाधान

प्रदूषण का अर्थ—स्वच्छ वातावरण में ही जीवन का विकास सम्भव है। जब वातावरण में कुछ हानिकारक तत्त्व आ जाते हैं तो वातावरण को दूषित कर देते हैं। यह गन्दा वातावरण जीवधारियों के लिए अनेक प्रकार से हानिकारक होता है। इस प्रकार वातावरण के दूषित हो जाने को ही प्रदूषण कहते हैं। जनसंख्या की असाधारण वृद्धि एवं औद्योगिक प्रगति ने प्रदूषण की समस्या को जन्म दिया है। औद्योगिक तथा रासायनिक कूड़े-कचरे के ढेर से पृथ्वी, हवा तथा पानी प्रदूषित हो रहे हैं।

प्रदूषण के प्रकार—आज के वातावरण में प्रदूषण निम्न रूपों में दिखाई पड़ता है–1. वायु-प्रदूषण, 2. जल-प्रदूषण, 3. ध्वनि-प्रदूषण, 4. रासायनिक-प्रदूषण।

1. वायु-प्रदूषण—वायुमण्डल में विभिन्न प्रकार की गैसें एक विशेष अनुपात में उपस्थित रहती हैं। जीवधारी अपनी क्रियाओं द्वारा ऑक्सीजन और कार्बन-डाइ-ऑक्साइड छोड़ते रहते हैं। हरे पौधे प्रकाश की उपस्थिति में कार्बन-डाइ-ऑक्साइड लेकर ऑक्सीजन निष्कासित करते रहते हैं। इससे वातावरण में ऑक्सीजन और कार्बन-डाइ-ऑक्साइड का सन्तुलन बना रहता है; किन्तु मानव अपने अज्ञानवश और आवश्यकता के नाम पर इस सन्तुलन को नष्ट करता रहता है।

2. जल-प्रदूषण—सभी जीवधारियों के लिए जल बहुत महत्त्वपूर्ण और आवश्यक है। पौधे भी अपना भोजन जल के माध्यम से प्राप्त करते हैं। यह भोजन पानी में घुला रहता है। जल में अनेक प्रकार के खनिज तत्त्व, कार्बनिक-अकार्बनिक पदार्थ तथा गैसें घुली रहती हैं। यदि जल में यह पदार्थ आवश्यकता से अधिक मात्रा में हो जाते हैं तो जल प्रदूषित होकर हानिकारक हो जाता है और वह प्रदूषित जल कहलाता है।

3. ध्वनि-प्रदूषण—ध्वनि-प्रदूषण आज की एक नयी समस्या है। इसे वैज्ञानिक प्रगति ने पैदा किया है। मोटर-कार, ट्रैक्टर, जेट विमान, कारखानों के साइरन, मशीनें तथा लाउडस्पीकर आदि ध्वनि के सन्तुलन को बिगाड़कर ध्वनि-प्रदूषण उत्पन्न करते हैं। तेज ध्वनि में श्रवण-शक्ति का ह्रास होता है और कार्य करने की क्षमता पर भी बुरा प्रभाव पड़ता है। कभी-कभी पड़ोस में लाउडस्पीकर बजने से रात भर नींद नहीं आती। इससे अनेक प्रकार की बीमारियाँ पैदा हो जाती हैं। अत्यधिक ध्वनि-प्रदूषण से मानसिक विकृति तक हो सकती है।

4. रासायनिक प्रदूषण—कारखाने से बहते हुए अवशिष्ट द्रव्यों के अलावा खाद्यान्न की उपज में वृद्धि की दृष्टि से प्रयुक्त कीटनाशक दवाइयों से और रासायनिक खादों से भी स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। ये पदार्थ पानी के साथ बहकर नदियों, तालाबों और अन्ततः समुद्र में पहुँच जाते हैं और जीवन को अनेक प्रकार से हानि पहुँचाते हैं।

प्रदूषण के कारण—पर्यावरण-प्रदूषण का सबसे बड़ा कारण विश्व की जनसंख्या में तेजी से होने वाली वृद्धि है। विश्व की जनसंख्या आज सुरसा की भाँति अपना मुँह फैलाती जा रही है। जनसंख्या में जिस तेजी के साथ विस्तार होता जा रहा है, उतनी ही तेजी से आदमी की सुविधाओं में ह्रास होता जा रहा है। रहने के लिए स्थान की भारी कमी आ रही है। खाने के लिए सन्तुलित भोजन उपलब्ध होना कठिन हो गया है।

पर्यावरण-प्रदूषण का दूसरा बड़ा कारण विज्ञान है। विज्ञान के आविष्कार जहाँ मानव जाति के लिए वरदान-स्वरूप सिद्ध हुए हैं, वहीं उनसे मानव का भयंकर अहित भी हुआ है। विज्ञान ने विभिन्न वस्तुओं के उत्पादन के लिए अनेक मशीनों का निर्माण किया है। इन मशीनों को चलाने के लिए ईंधन के रूप में पेट्रोल, डीजल, कोयला, लकड़ी, तेल आदि का उपयोग किया जाता है। कारखानों की ऊँची-ऊँची चिमनियों से दिन-रात निकलने वाले धुएँ की अपार राशि सारे वातावरण को दूषित करती रहती है। धुएँ से सारा वातावरण कालिमामय दिखाई देता है। इसके साथ ही इन कारखानों से निकलने वाला दूषित जल जहाँ भी जाकर स्वच्छ जल में मिलता है, वहाँ का जल विषाक्त हो जाता है। बड़ी-बड़ी नदियों में जहाँ-जहाँ ऐसे कारखाने का जल मिलता है, वहाँ बड़ी दूर तक नदियों का जल विषाक्त हो जाता है। उनमें कोई जीव-जन्तु जीवित नहीं बच पाता।

प्रदूषण की रोकथाम के उपाय—पर्यावरण को दूषित करने वाली परिस्थितियाँ आज मानव के समक्ष चुनौती बनकर खड़ी हैं। वातावरण को दूषित करने में हम सभी जिम्मेदार हैं। अतः इसका निदान भी हम सबको मिलकर ही करना पड़ेगा। हमारे प्राचीन ऋषि-मुनियों ने इस समस्या को गम्भीरता से समझा था। इसलिए उन्होंने यज्ञ की सृष्टि की थी। यज्ञों में प्रयुक्त घी, तिल आदि के कारण वातावरण शुद्ध रहता है। लेकिन आज इन चीजों का प्रयोग करना कठिन है। यज्ञ की कल्पना आज असम्भव हो गयी है।

अतः इस समस्या पर नियन्त्रण के लिए सबसे प्रथम उपाय तो यह है कि बढ़ती हुई जनसंख्या पर नियन्त्रण किया जाय। सीमित जनसंख्या रहने से पर्यावरण दूषित होने की सम्भावना कम रहेगी। साथ ही अधिक-से-अधिक वृक्षारोपण भी पर्यावरण को स्वच्छ बनाने में मदद करता है और उस जगह का वातावरण भी सुन्दर होगा।

नदियों के पानी को प्रदूषण से बचाने के लिए हमें उस जल में मृत जीवों अथवा शवों को प्रवाहित नहीं करना चाहिए। धुआँ रोकने के लिए यह सुगम उपाय है कि कल-कारखाने ऐसे स्थानों पर लगाएँ जायँ जहाँ जनसंख्या अधिक न हो।

उपसंहार—उपर्युक्त उपायों से हम वातावरण को शुद्ध बनाये रख सकते हैं। पर्यावरण-प्रदूषण की समस्या सारे विश्व में है। इससे कोई भी देश या क्षेत्र बच नहीं सकता, अतः इस समस्या को सामूहिक रूप से सुलझाने का प्रयत्न करना चाहिए। शासन द्वारा इस दिशा में जो प्रयास किये जा रहे हैं, उनमें हमें भी पूरी सामर्थ्य के साथ सहायता करनी चाहिए। हम गरीब देश और प्रदेश के निवासी हैं। पर्यावरण-प्रदूषण के महँगे कार्यक्रमों पर चलना हमारे लिए सरल नहीं है। यदि इन कार्यक्रमों के उत्पादन-पक्ष का समावेश कर लें तो फिर हमारे लिए वह भी सुगम हो जायेगा।

2. विज्ञान : वरदान है या अभिशाप

विज्ञान आज ईश्वर की भाँति सर्वव्यापी हो गया है। मानव जीवन का कोई ऐसा क्षेत्र नहीं, कोई ऐसा कोना नहीं, जहाँ विज्ञान न हो। मानव सुख-सुविधाओं के लिए विज्ञान ने क्या नहीं किया। मनोरंजन के सुलभ साधन– रेडियो, टेलीविजन, टेलीफोन, सिनेमा, ग्रामोफोन ये सभी उपकरण विज्ञान की ही देन हैं। विज्ञान की बदौलत आज मानव जीवन एक रंगीन कल्पनाओं का सुनहरा संसार बन गया है। काल की दाढ़ में उलझे-कराहते रोगी के लिए विज्ञान नव-जीवन का वरदान लेकर प्रकट हुआ है। चिकित्सा के एक-से-एक साधन विज्ञान उपलब्ध कराता है। शरीर का एक-एक अंग यहाँ तक कि हृदय और आँख तक भी विज्ञान के सहारे प्रत्यारोपित किये जा रहे हैं। अब तो परखनली के सहारे सृष्टि सर्जना का भी प्रयास किया जा रहा है और शव में भी प्राण फूँकने के लिए वैज्ञानिक प्रयत्नशील हैं।

विज्ञान वरदान है—आधुनिक विज्ञान ने मानव-सेवा के लिए अनेक प्रकार के साधन जुटा दिए हैं। पुरानी कहानियों में वर्णित अलादीन का चिराग आज मामूली और तुच्छ जान पड़ता है। अलादीन के चिराग का दैत्य जो काम करता था, उन्हें विज्ञान बड़ी सरलता से कर देता है। रातों-रात महल बनाकर खड़ा कर देना, आकाश-मार्ग से उड़कर दूसरे स्थान पर चले जाना, शत्रु के नगरों को मिनटों में बरबाद कर देना ऐसे ही कार्य हैं। यथा— विज्ञान मानव जीवन के लिए महान वरदान सिद्ध हुआ है। उसकी वरदायिनी शक्ति ने मानव को अपरिमित सुख-समृद्धि प्रदान की है।

(क) परिवहन के क्षेत्र में—पहले लम्बी यात्राएँ दुरूह स्वप्न-सी लगती थी; किन्तु आज रेलों, मोटरों और वायुयानों ने लम्बी यात्राओं को अत्यन्त सुगम व सुलभ कर दिया है। पृथ्वी ही नहीं, आज के वैज्ञानिक साधनों के द्वारा मनुष्य ने चन्द्रमा पर भी अपने कदमों के निशान बना दिये हैं।

(ख) संचार के क्षेत्र में—टेलीफोन, टेलीग्राम, टेलीप्रिन्टर आदि द्वारा क्षण भर में सन्देश पहुँचाये जा सकते हैं। रेडियो और टेलीविजन द्वारा कुछ ही पलों में एक समाचार विश्व भर में फैलाया जा सकता है।

(ग) औद्योगिक क्षेत्र में—भारी मशीनों के निर्माण ने बड़े-बड़े कल-कारखानों को जन्म दिया है, जिससे श्रम, समय और धन की बचत के साथ-साथ प्रचुर मात्रा में उत्पादन सम्भव हुआ है। इससे विशाल जनसमूह को आवश्यक वस्तुएँ सस्ते मूल्य पर उपलब्ध करायी जा सकती हैं।

(घ) कृषि के क्षेत्र में—ट्रैक्टरों, ट्यूबवेलों, रासायनिक खाद एवं बीजों की नयी-नयी किस्मों ने कृषि-उत्पादन को बहुत बढ़ाया है, जिससे विश्व की बढ़ती जनसंख्या का पेट भरना संभव हो सका है।

(ङ) शिक्षा के क्षेत्र में—मुद्रण-यन्त्रों के आविष्कार ने बड़ी संख्या में पुस्तकों का प्रकाशन सम्भव बनाया है, जिससे पुस्तकें सस्ते मूल्य पर मिल सकी हैं। इसके अतिरिक्त समाचार-पत्र, पत्र-पत्रिकाएँ आदि भी मुद्रण-क्षेत्र में हुई क्रान्ति के फलस्वरूप घर-घर पहुँचकर लोगों का ज्ञानवर्द्धन कर रही हैं। आकाशवाणी, दूरदर्शन आदि की सहायता से शिक्षा के प्रसार में बड़ी सहायता मिली है। कम्प्यूटर के विकास ने तो इस क्षेत्र में क्रान्ति ला दी है।

(च) मनोरंजन के क्षेत्र में—चलचित्र, आकाशवाणी, दूरदर्शन आदि ने मनोरंजन को सस्ता और सुलभ बना दिया है। वी0 सी0 आर0, ग्रामोफोन, टेपरिकार्डर आदि इस दिशा में और सहायक सिद्ध हुए हैं।

(छ) चिकित्सा के क्षेत्र में—चिकित्सा के क्षेत्र में तो विज्ञान वास्तव में वरदान सिद्ध हुआ है। आधुनिक चिकित्सा-पद्धति इतनी विकसित हो गयी है कि अन्धों को आँखें और अपंग को अंग मिलना अब असम्भव नहीं लगता। कैंसर, टी0 बी0, हृदयरोग जैसे भयंकर और प्राणघातक रोगों पर विजय पाना विज्ञान के माध्यम से ही सम्भव हुआ है।

(ज) खाद्यान्न के क्षेत्र में—आज हम अन्न के मामले में आत्म-निर्भर होते जा रहे हैं; इसका श्रेय आधुनिक विज्ञान को ही है। विभिन्न प्रकार के उर्वरकों, कीटनाशक दवाओं, खेती के आधुनिक साधनों तथा जल-सम्बन्धी कृत्रिम व्यवस्था ने खेती को सरल व लाभदायक बना दिया है।

(झ) दैनिक जीवन में—हमारे दैनिक जीवन का प्रत्येक कार्य विज्ञान पर आधारित है। विद्युत हमारे जीवन का महत्त्वपूर्ण हिस्सा बन गयी है। बिजली के पंखे, गैस, स्टोव, फ्रिज आदि के निर्माण ने मानव को सुविधापूर्ण जीवन का वरदान दिया है। इन आविष्कारों से समय, शक्ति और धन की पर्याप्त बचत हुई है।

विज्ञान ने हमारे जीवन को इतना अधिक परिवर्तित कर दिया है कि यदि दो सौ वर्ष पूर्व का कोई व्यक्ति हमें देखे, तो यही समझे कि हम स्वर्ग में रह रहे हैं। यह कहने में कोई अतिशयोक्ति न होगी कि भविष्य का विज्ञान मृत व्यक्ति को भी जीवनदान दे सकेगा। इसलिए विज्ञान को वरदान न कहा जाय तो क्या कहा जाय?

वैज्ञानिक अभिशाप—वैज्ञानिक अभिशाप के दो रूप हैं—एक तो प्रत्यक्ष रूप है, जो विध्वंसकारी अस्त्र-शस्त्रों से सम्बन्धित है। टैंक, डायनामाइट, राकेट बम, परमाणु बम, हाइड्रोजन बम आदि ऐसे अस्त्र हैं, जो पलक झपकते ही लाखों जीवों का संहार कर सकते हैं। इन बमों के विस्फोट से वायुमण्डल भी दूषित हो जाता है, जिससे अनेक रोग पैदा हो जाते हैं।

वैज्ञानिक अभिशाप के अप्रत्यक्ष रूप के अन्तर्गत कला और संस्कृति का ह्रास होता है। वैज्ञानिक आविष्कारों की बदौलत अनेक प्रकार की मशीनें तैयार हुई हैं, जो कम व्यय, थोड़े श्रम और अल्प समय में अधिक-से-अधिक मात्रा में वस्तुओं को तैयार कर देती हैं । इस प्रकार श्रमिक की निजी कला का ह्रास हो जाता है। उनकी रोजी-रोटी पर भी अप्रत्यक्ष हानिकारक प्रभाव पड़ता है। देश में विलासिता की वृद्धि होती जा रही है। मनुष्य की आत्मनिर्भरता समाप्त हो जाती है। वह मशीनों का गुलाम हो जाता है। दूसरी ओर श्रमिकों में बेकारी तो बढ़ती है, छोटे-छोटे उद्योग-धन्धे समाप्त हो जाते हैं।

विज्ञान वरदान या अभिशाप—विज्ञान के विषय में उक्त दोनों दृष्टियों पर विचार करने के बाद यह बात पूरी तरह स्पष्ट हो जाती है कि एक ओर विज्ञान हमारे कल्याण का उपासक है तो दूसरी ओर विनाश का कारण भी। किन्तु सारे विनाश के लिए विज्ञान को उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता। विज्ञान तो एक शक्ति है, जिसका उपयोग अच्छे और बुरे—दोनों तरह के कार्यों के लिए किया जा सकता है। यह एक तलवार है, जिससे शत्रु का गला भी काटा जा सकता है और मूर्खता से अपना भी। विनाश करना विज्ञान का दोष नहीं है, अपितु मनुष्य के असंस्कृत मन का दोष है।

यदि मनुष्य अपनी प्रवृत्तियों को रचनात्मक दिशा में ढाल दे तो विज्ञान एक बड़ा वरदान है; किन्तु जब तक मनुष्य मानसिक विकास की उस सीढ़ी पर नहीं पहुँचता, तब तक विज्ञान से जितना विनाश होगा, उसे अभिशाप ही समझा जाएगा।

3. कम्प्यूटर की शैक्षिक उपयोगिता

वास्तव में कम्प्यूटर ऐसे यान्त्रिक मस्तिष्क का रूपात्मक और समन्वयात्मक योग तथा गुणात्मक घनत्व है, जो तीव्रतम गति से न्यूनतम समय में त्रुटिहीन गणना कर सके। मानव सदा से ही अपनी गणितीय गणनाओं के लिए गणना-यन्त्रों का प्रयोग करता रहा है। आज तो अनेक प्रकार के जटिल गणना-यन्त्र बना लिए गये हैं, जो बहुत जटिल गणनाओं का परिकलन अपने-आप कर लेते हैं। इन सबमें सर्वाधिक तीव्र, शुद्ध एवं सबसे उपयोगी गणना करने वाला यन्त्र कम्प्यूटर है। चार्ल्स बेवेज नामक व्यक्ति ने 19वीं शताब्दी के आरम्भ में पहला कम्प्यूटर बनाया। यह कम्प्यूटर लम्बी-लम्बी गणनाएँ कर उनके परिणामों को मुद्रित कर देता था। धीरे-धीरे विकसित होकर आज कम्प्यूटर स्वयं गणनाएँ करके जटिल-से-जटिल समस्याओं को मिनटों में हल कर देता है, जिसे करने के लिए मनुष्य को कदाचित कई दिन अथवा महीने लग जाएँ। कम्प्यूटर से की जाने वाली गणनाओं के लिए एक विशेष भाषा में निर्देश तैयार किये जाते हैं। इन निर्देशों और सूचनाओं को कम्प्यूटर का 'प्रोग्राम' कहा जाता है। यदि कम्प्यूटर से प्राप्त होने वाला परिणाम अशुद्ध है तो उसका तात्पर्य यह है कि उसके 'प्रोग्राम' में कहीं-न-कहीं त्रुटि रह गयी, क्योंकि कम्प्यूटर कोई गलती कर ही नहीं सकता। कम्प्यूटर का केन्द्रीय मस्तिष्क अपने सारे काम दो अंगों या संकेतों की गणितीय भाषा में ही करता है। अक्षरों या शब्दों को भी दो संकेतों की इस मशीनी भाषा में बदला जा सकता है। इस तरह अब शब्दों या पाठों का अथवा पूरी पाठ्य-पुस्तकें कम्प्यूटर के द्वारा छापी जा सकती हैं।

कम्प्यूटर का प्रयोग—कम्प्यूटर आज मानव-मस्तिष्क पर पूरी तरह छा गया है। बड़े-बड़े व्यवसाय, तकनीकी संस्थान और महत्त्वपूर्ण संस्थानों में कम्प्यूटर का प्रयोग मानव-मस्तिष्क के रूप में किया जा रहा है। आज कम्प्यूटर की सहायता से सूचनाएँ प्राप्त की जाती हैं और सूचनाएँ भेजी जा सकती हैं।

बड़े-बड़े बैंकों में खातों के रख-रखाव के लिए कम्प्यूटर का प्रयोग किया जा रहा है। टंकण एवं प्रकाशन के क्षेत्र में भी कम्प्यूटर का महत्त्वपूर्ण योगदान है। दूर-संचार के क्षेत्र में भी कम्प्यूटर को अत्यधिक सफलता प्राप्त हुई है। वास्तुशिल्प एवं डिजाइनिंग में भी

कम्प्यूटर का महत्त्वपूर्ण योगदान है। इसके द्वारा डिजाइनें तैयार की जा सकती हैं। वैज्ञानिक अनुसंधान में भी कम्प्यूटर का महत्त्वपूर्ण योगदान है। औद्योगिक क्षेत्र के भी कार्य-संचालन में कम्प्यूटर का विशेष योगदान है। कम्प्यूटर का आविष्कार युद्ध के एक साधन के रूप में भी किया गया है। एटम बम की गणना के लिए कम्प्यूटर का प्रयोग किया जाता है।

वर्तमान समय में कम्प्यूटर का प्रयोग परीक्षाफल के निर्माण, मौसम की जानकारी, चिकित्सा क्षेत्र, चुनाव-कार्य आदि में भी किया जाता है।

कम्प्यूटर और मानव-मस्तिष्क—कम्प्यूटर के मस्तिष्क का निर्माण मानव-बुद्धि ने किया है। यह बात नितांत सत्य है कि कम्प्यूटर समस्याओं को मानव-मस्तिष्क की अपेक्षा बहुत कम समय में हल कर सकता है। फिर भी वह एक यन्त्र है जो संवेदनाओं, रुचियों तथा चिन्तनों से रहित है। यह केवल निर्देशित कार्यों को ही करता है। वह कोई निर्णय स्वयं नहीं ले सकता और न ही कोई नवीन बात सोच सकता है। यह सभी मानवीय आवश्यकताओं को पूर्ण करने में सक्षम है, परन्तु मानव-मस्तिष्क की बराबरी नहीं कर सकता।

उपसंहार—वर्तमान कम्प्यूटर युग में प्रवेश करके हमने पूर्णरूप से अपने को कम्प्यूटर के हवाले कर दिया है। कम्प्यूटर हमें बोलना, व्यवहार करना, अपने जीवन को जीना, मित्रों से मिलना और उनके विषय में ज्ञान प्राप्त करना आदि सब कुछ सिखायेगा। इसका अभिप्राय यह हुआ कि हम अपने प्रत्येक निर्णय को कम्प्यूटर से पूछने पर विवश हो जायेंगे। किन्तु कम्प्यूटर में जो कुछ भी एकत्रित किया गया है, वह आज के असाधारण बुद्धिजीवियों की देन है।

अतः स्पष्ट है कि वर्तमान युग में कम्प्यूटर का महत्त्वपूर्ण योगदान है।

4. मेरे प्रिय साहित्यकार (लेखक) : मुंशी प्रेमचन्द

मुंशी प्रेमचन्द की दृष्टि में सब समान थे। वे दीन-दुखियों के पक्षधर, कृषकों के मित्र, अन्याय के विरोधी, शोषण के शत्रु और साहित्य के पुजारी थे। प्रेमचन्द का जन्म वाराणसी के निकट लमही गाँव में 31 जुलाई, 1880 ई. को हुआ था। निरन्तर साहित्य-सेवा करते हुए भारत की मुक्ति के लिए प्रयत्नशील रहते हुए उपन्यास-सम्राट प्रेमचन्द भारत के स्वाधीन होने से दस-ग्यारह वर्ष पहले 8 अक्टूबर, 1936 ई. को हमसे सदा के लिए विदा हो गए।

प्रेमचन्द के पुत्र **श्री अमृतराय** के शब्दों में—"क्या तो उनका हुलिया था। घुटनों से जरा ही नीचे तक पहुँचने वाली मिल की धोती, उसके ऊपर गाढ़े का कुर्ता और पैर में बन्ददार जूता; यानि कुल मिलाकर आप उसे देहकान ही कहते, गँवइया भुच्च, जो अभी गाँव से चला आ रहा है, जिसे कपड़ा पहनने की भी तमीज नहीं। यह भी नहीं मालूम कि धोती-कुर्ते पर चप्पल पहनी जाती है या पम्प। आप शायद उन्हें प्रेमचन्द कहकर पहचानने से ही इनकार कर देते।.........और अब भी मुझे उनके दोनों पैरों की कानी उँगली अच्छी तरह याद है, जो जूते को चीरकर बाहर निकली रहती थी। सादगी इससे आगे नहीं जा सकती।"

कथा-साहित्य में आगमन—हिन्दी कथा-साहित्य में प्रेमचन्द के आगमन से एक नये युग का सूत्रपात हुआ। उन्होंने हिन्दी कथा-साहित्य को नया आयाम दिया और उसे अनन्त विस्तारमय क्षितिजों का संस्पर्श कराया।

विषय की विविधता—प्रेमचन्द के कथा-साहित्य में विषय की विविधता है। वे कहानी को मानव-जीवन का चित्रण मानते हैं। मानव-जीवन विविधतापूर्ण है, अतः उनकी कहानियों और उपन्यासों में जीवन के विविध मार्मिक पक्षों का उद्घाटन हुआ है। उनमें कहीं पर जीवन का सामाजिक पक्ष उभरा है, कहीं आर्थिक, कहीं नैतिक तो कहीं मनोवैज्ञानिक पक्ष दिखाई देता है।

यथार्थ का चित्रण—प्रेमचन्द शिव के उपासक थे। उनकी रचनाओं में यथार्थ जीवन का चित्रण हुआ है; किन्तु जीवन के आदर्श रूप की ओर मुड़ती हुई ये रचनाएँ हमारे मन पर मंगलमय प्रभाव छोड़ती हैं। इस प्रकार उनकी रचनाएँ यथार्थ की पृष्ठभूमि पर प्रतिष्ठित होते हुए भी आदर्श की ओर उन्मुख हैं। यह आदर्शोन्मुख यथार्थवाद उनकी रचनाओं की अपनी विशेषता कही जा सकती है।

शाश्वत जीवन-मूल्य—प्रेमचन्द शाश्वत जीवन-मूल्यों के लेखक थे। उनकी धारदार दृष्टि ने जीवन की वास्तविकता को देखा और परखा था। उन्होंने पराधीनता की कठोरता को देखा और भोगा था। उनका साहित्य इन परिस्थितियों और अनुभवों का सच्चा दस्तावेज है। जिन जीवन-मूल्यों को प्रेमचन्द ने अपने साहित्य में उद्घाटित किया है, वे आज भी हमारे समाज में पूर्ण रूप से मूल्यवान हैं।

देश की संस्कृति पर आधारित दृष्टिकोण—प्रेमचन्द की सम्पूर्ण रचनाएँ भारतीयता से ओत-प्रोत हैं। उनके साहित्य में स्वतन्त्रतापूर्व भारतीय परिवेश की जीती-जागती झाँकी प्रस्तुत हुई है। उसमें सामाजिक जीवन के विविध रूप व व्यापक दृश्य आज भी ज्यों-के-त्यों बोलते-से दिखाई देते हैं। गाँधीजी ने देश की स्वाधीनता के लिए जिस विचार क्रान्ति की वकालत की थी, उसे प्रेमचन्द ने अपने साहित्य द्वारा विकसित किया। इस दृष्टि से प्रेमचन्द क्रान्तिद्रष्टा साहित्यकार कहे जा सकते हैं। वस्तुतः प्रेमचन्द हमारे युग के साहित्य-सुधाकर थे। उनकी प्रतिभा का पूर्ण आकलन कर पाना लगभग असम्भव है। उनकी महानता ऐसी है कि वे समय के प्रवाह के

साथ उत्तरोत्तर अग्रसर होने पर और अधिक जगमगाएँगे। उनके द्वारा रचित कृतियाँ मात्र हिन्दी साहित्य की ही नहीं, राष्ट्र की भी गौरव प्रतीक हैं।

5. मेरे प्रिय कवि (सुमित्रानन्दन पन्त)

सुमित्रानन्दन पन्त जी ने अपने शैशव की किलकारियाँ प्रकृति के आँचल में ही भरीं। उनका जन्म अल्मोड़ा नगर के कौसानी गाँव में 20 मई, 1900 ई. को हुआ था। उनके पिता का नाम पं. गंगादत्त एवं माता का नाम सरस्वती देवी था। परन्तु जन्म के कुछ समय बाद ही माता का देहान्त हो गया। उनके बचपन का नाम गुसाँई दत्त था। काशी के जयनारायण स्कूल से 1919 ई. में उन्होंने हाई स्कूल परीक्षा उत्तीर्ण की और इलाहाबाद में म्योर सेन्ट्रल कालेज में प्रवेश लिया। 1921 ई. में गाँधीजी के आह्वान पर उन्होंने कालेज छोड़ दिया और साहित्य साधना में संलग्न हो गये। कविता लिखने का शौक उन्हें बचपन से ही रहा और इसकी प्रेरणा-स्रोत थी प्रकृति।

रचनाएँ—पन्तजी मूलतः कवि थे। उन्होंने कहानी, नाटक, निबन्ध पर भी लेखनी चलाई, किन्तु उधर उनका अधिक मन नहीं रमा। अन्ततः काव्य ही उनकी मूल साधना रही। वीणा, ग्रन्थि, पल्लव, गुंजन, युगान्त, युगवाणी, ग्राम्या, स्वर्ण-धूलि, स्वर्ण-किरण, युग-पथ, उत्तरा, अतिमा, रजत-रश्मि, चिदम्बरा, कला और बूढ़ा चाँद, रश्मिबन्ध, लोकायतन आदि उनके काव्य-ग्रन्थ हैं।

काव्यगत विशेषताएँ—पन्त जी की काव्यगत विशेषताएँ निम्नलिखित हैं—

प्राकृतिक सौन्दर्य-चेतना— पन्त जी की प्रकृति-सौन्दर्य-चेतना सर्वप्रथम हिमाच्छादित पर्वतमालाओं, बादलों, इन्द्रधनुष, नक्षत्र और सरिताओं की सुषमा देखकर सजग हुई और उनका कवि-हृदय आनन्द से भाव-विभोर हो उठा। यौवन के प्रथम चरण में उन्होंने किसी किशोरी के बाल-जाल में अपने लोचन उलझाने की आकांक्षा मन में प्रकट की थी, फिर भी वृक्षों की छाया को छोड़ प्रेयसि केशों में उलझना उन्हें स्वीकार नहीं हो सका—

छोड़ द्रुमों की मृदु छाया,
तोड़ प्रकृति से भी माया
बाले तेरे बाल जाल में,
कैसे उलझा दूँ लोचन।

वास्तव में पन्तजी प्रकृति की सुकुमार भावनाओं के कवि हैं। उनका रहस्यवाद भी प्रकृति-सौन्दर्य से प्रभावित है।

राष्ट्र-प्रेम की भावना—पन्तजी के काव्य में प्रकृति-सौन्दर्य और युग-चेतना के साथ-साथ राष्ट्र-प्रेम की भावना भी विद्यमान है। कवि को देश से स्वाभाविक प्रेम है। भारत माता का सजीव चित्र देखिए—

भारत माता ग्राम वासिनी।
तीस कोटि सन्तान नग्न, तन
अर्द्धक्षुधित शोषित निरस्त्र जन,
मूढ़ असभ्य अशिक्षित निर्धन,
नत मस्तक तरु तल निवासिनी।

भाषा-शैली—पन्त जी की भाषा शुद्ध साहित्यिक खड़ीबोली है, जिसमें संस्कृत के तत्सम शब्दों का प्रयोग किया गया है, फिर भी भाषा में कोमलता और माधुर्य कूट-कूट कर भरा हुआ है। कहीं-कहीं फारसी और ब्रजभाषा के शब्द भी प्रयुक्त हुए हैं। यत्र-तत्र सन्धि और लिंग के नियमों का उल्लंघन भी भाषा में दिखाई पड़ता है।

रस-छन्द-अलंकार—पन्तजी के प्रेमात्मक काव्य में शृंगार और प्रगतिवादी रचनाओं में करुण रस का सुन्दर परिपाक हुआ है। यद्यपि पन्त जी की रचनाओं में संयोग और वियोग दोनों रसों का वर्णन है, किन्तु संयोग की अपेक्षा वियोग-चित्रण में इनको विशेष सफलता मिली।

पन्तजी ने मात्रिक छन्दों का विशेष प्रयोग किया है। काव्य में संगीतात्मकता और कोमलता लाने के लिए उन्होंने आवश्यकतानुसार परिवर्तन भी किया है।

उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा आदि सादृश्यमूलक अलंकार पन्तजी को विशेष प्रिय हैं; किन्तु उनका प्रयोग किसी सजावट के आग्रह से नहीं, बल्कि स्वाभाविक रूप से हुआ है। इसके अतिरिक्त अनुप्रास, सन्देह, उल्लेख आदि अलंकारों का भी प्रयोग काव्य में देखने को मिल जाता है।

उपसंहार—भाव और कला दोनों दृष्टियों से विचार करने पर यह सिद्ध होता है कि पंतजी आधुनिक युग के प्रतिनिधि कवि हैं। इनके काव्य में विचारों की गहनता के साथ-साथ भावों की व्यंजना इतनी कोमल और कमनीय पदावली में हुआ है कि यह निर्णय कर

पाना कठिन हो जाता है कि पन्त जी कवि अधिक हैं अथवा विचारक या शिल्पी। सचमुच ही पन्त जी प्रकृति के सुकुमार कवि हैं, युग के महान चिन्तक हैं और काव्य के सुन्दर शब्द-शिल्पी हैं। उनके काव्य का नाद-सौन्दर्य अत्यन्त ही सुन्दर और आकर्षक है।

6. भारतीय किसानों की समस्याएँ और समाधान

प्रस्तावना–ग्राम भारतीय सभ्यता के प्रतीक हैं। भोजन एवं अन्य आवश्यकताएँ गाँव ही पूर्ण करते हैं। भारत का औद्योगिक स्वरूप भी ग्रामीण कृषकों पर ही निर्भर है। वस्तुतः भारतीय अर्थव्यवस्था का मूल आधार ग्राम ही है। यदि गाँवों का विकास होगा तभी देश भी समृद्ध होगा।

किसानों की सामाजिक समस्याएँ– विकास के इस युग में भी गाँवों में शिक्षा, स्वास्थ्य, मनोरंजन तथा परिवहन के साधनों की समुचित व्यवस्था नहीं हो सकी है, जिसके कारण भारतीय किसानों को अनेक परेशानियाँ सहनी पड़ती हैं। वह साधनों के अभाव में अपने बच्चों के लिए शिक्षा का प्रबन्ध भी नहीं कर पा रहा है, जो उसके पिछड़ने का सबसे बड़ा कारण है। भारतीय किसान अपनी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए ही पूरा जीवन प्रयास करता रहता है। इसी कारण वह आधुनिक परिवेश से अनभिज्ञ ही रहता है।

आर्थिक समस्याएँ–गाँवों के अधिकांश किसानों की आर्थिक स्थिति अत्यन्त शोचनीय है। उसकी उपज का उचित मूल्य उसे नहीं मिल पाता। धन के अभाव में वह अच्छी पैदावार भी नहीं ले पाता, जिसका प्रभाव सम्पूर्ण राष्ट्र के विकास पर पड़ता है। गाँवों में निर्धनता, भुखमरी और बेरोजगारी अपनी चरम सीमा पर है। कृषकों को कृषि से सम्बन्धित जानकारी सुगमता से सुलभ नहीं हो पाती।

वर्तमान स्थिति– गाँवों में अभी भी पक्की सड़कों का अभाव है। शिक्षा, स्वास्थ्य तथा मनोरंजन के साधनों का उपयुक्त प्रबन्ध नहीं है। बेरोजगारी अपने चरम पर है तथा संचार के समुचित साधनों, पेय-जल, उपयुक्त निर्देशन एवं परामर्श सम्बन्धी सुविधाओं का अभाव है।

कृषि की स्थिति– देश के कुल निर्यात में कृषि का योगदान लगभग 18 प्रतिशत है। अनाज की प्रति व्यक्ति उपलब्धता सन् 2000 ई. में प्रतिदिन 467 ग्राम तक पहुँच गई, जबकि पाँचवें दशक की शुरुआत में यह प्रति व्यक्ति 395 ग्राम प्रतिदिन थी। स्वतन्त्रता के पश्चात् निरन्तर कृषि उत्पादन में वृद्धि दर्ज की गई है, लेकिन वर्ष 2002 में देश के अधिकांश हिस्सों में सूखा पड़ा जिसके कारण 2001-02 ई. के लिए कृषि उत्पादन के लिए लगाए गये सारे अनुमान बेकार हो गए। यद्यपि धान की पूरी फसल नष्ट हो गई, फिर भी आज हम खाद्यान्न के क्षेत्र में आत्मनिर्भर हैं।

विज्ञान का योगदान– जनसंख्या की दृष्टि से भारत का विश्व में दूसरा स्थान है। पहले इतनी बड़ी जनसंख्या के लिए अन्नपूर्ति करना असम्भव ही प्रतीत होता था, परन्तु आज हम अन्न के मामले में आत्म-निर्भर हो गए हैं। इसका श्रेय आधुनिक विज्ञान को ही है। विभिन्न प्रकार के उर्वरकों, बुआई-कटाई के आधुनिक साधनों, कीटनाशक दवाइयों तथा सिंचाई के कृत्रिम साधनों ने खेती को अत्यन्त सुविधापूर्ण एवं सरल बना दिया है।

नवीन योजनाएँ– गाँव के विकास हेतु सरकार के द्वारा नवीन योजनाओं का शुभारम्भ किया जा रहा हैं। गाँवों में परिवहन, विद्युत, सिंचाई के साधन, पेयजल, शिक्षा आदि की व्यवस्था हेतु व्यापक स्तर पर प्रयास किए जा रहे हैं। किसानों को उन्नत बीजों का प्रयोग करने के लिए विभिन्न योजनाओं के द्वारा प्रोत्साहित किया जा रहा है। आधुनिक कृषि यन्त्र खरीदने के लिए विभिन्न प्रकार के अनुदान दिए जा रहे हैं। किसानों के उत्थान के लिए राष्ट्रीय-कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक की स्थापना की गई है, जिसका उद्देश्य कृषि, पशुपालन, कुटीर तथा ग्रामोद्योग को आर्थिक सहायता देकर प्रोत्साहित करना है।

राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक– राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक का उद्देश्य कृषि, लघु उद्योगों, कुटीर तथा ग्रामोद्योगों, दस्तकारियों और ग्रामीण क्षेत्रों में अन्य आर्थिक गतिविधियों को प्रोत्साहन देने के लिए ऋण उपलब्ध कराना था ताकि ग्रामीण क्षेत्रों को खुशहाल बनाया जा सके।

कृषि अनुसंधान और शिक्षा– कृषि अनुसंधान और शिक्षा विभाग की स्थापना कृषि मंत्रालय के अन्तर्गत 1973 ई. में की गई थी। यह विभाग कृषि, पशुपालन और मत्स्यपालन के क्षेत्र में अनुसंधान और शैक्षिक गतिविधियाँ संचालित करने के लिए उत्तरदायी है। कृषि मंत्रालय के कृषि अनुसंधान और शिक्षा विभाग के प्रमुख संगठन 'भारतीय कृषि अनुसन्धान परिषद्' ने कृषि प्रौद्योगिकी के विकास, निवेश सामग्री तथा खाद्यान्न में आत्मनिर्भरता लाने के लिए प्रमुख वैज्ञानिक जानकारियों को आम लोगों तक पहुँचाने के मामले में प्रमुख भूमिका निभाई है।

7. बेरोजगारी की समस्या और समाधान

बेरोजगारी का अभिप्राय उस स्थिति से है, जब कोई योग्य तथा काम करने के लिए इच्छुक व्यक्ति प्रचलित मजदूरी की दरों पर कार्य करने के लिए तैयार हो और उसे काम न मिलता हो। बालक, वृद्ध, रोगी, अक्षम एवं अपंग व्यक्तियों को बेरोजगारों की श्रेणी में नहीं रखा जा सकता क्योंकि जो व्यक्ति काम करने के इच्छुक नहीं हैं और परजीवी हैं वे बेरोजगारों की श्रेणी में नहीं आते।

बेरोजगारी किसी भी देश अथवा समाज के लिए अभिशाप होती है। इससे एक ओर निर्धनता, भुखमरी तथा मानसिक अशान्ति फैलती है तो दूसरी ओर युवकों में आक्रोश तथा अनुशासनहीनता को भी प्रोत्साहन मिलता है। चोरी, डकैती, हिंसा, अपराध-वृत्ति एवं आत्महत्या आदि अनेक समस्याओं के मूल में एक बड़ी सीमा तक बेरोजगारी ही जिम्मेदार है। बेरोजगारी एक ऐसा भयंकर विष है, जो सम्पूर्ण देश के आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक जीवन को दूषित कर देता है।

हमारे देश में बेरोजगारी के अनेक कारण हैं। इनमें से कुछ प्रमुख कारणों का उल्लेख निम्नलिखित है—

1. बेरोजगारी का प्रमुख कारण है—जनसंख्या में तीव्रगति से वृद्धि। विगत कुछ दशकों में भारत में जनसंख्या का विस्फोट हुआ है। हमारे देश की जनसंख्या में प्रति वर्ष लगभग 2.5% की वृद्धि हो जाती है; जबकि इस दर से बेकार हो रहे व्यक्तियों के लिए हमारे देश में रोजगार की व्यवस्था नहीं है।

2. भारतीय शिक्षा सैद्धान्तिक अधिक है। यह व्यावहारिकता से शून्य है। इसमें पुस्तकीय ज्ञान पर ही विशेष ध्यान दिया जाता है; फलतः यहाँ के स्कूल-कॉलेजों से निकलने वाले छात्र दफ्तर के लिपिक ही बन पाते हैं। वे निजी उद्योग-धन्धे स्थापित करने योग्य नहीं बन पाते हैं।

3. विगत पंचवर्षीय योजनाओं में देश के औद्योगिक विकास के लिए प्रशंसनीय कदम उठाए गए हैं, किन्तु समुचित रूप से देश का औद्योगिकीकरण नहीं किया जा सकता है; अतः बेकार व्यक्तियों के लिए रोजगार नहीं उपलब्ध हो पा रहे हैं।

4. हमारे देश में कुशल एवं प्रशिक्षित व्यक्तियों की कमी है। अतः उद्योगों के सफल संचालन के लिए विदेशों से प्रशिक्षित कर्मचारी बुलाने पड़ते हैं। इस कारण से देश के कुशल एवं प्रशिक्षित व्यक्तियों के बेकार हो जाने की भी समस्या हो जाती है।

इनके अतिरिक्त मानसून की अनियमितता, भारी संख्या में शरणार्थियों का आगमन, मशीनीकरण के फलस्वरूप होनेवाली श्रमिकों की छँटनी, श्रम की माँग एवं पूर्ति से असन्तुलन, आर्थिक साधनों की कमी आदि से भी बेरोजगारी में वृद्धि हुई है। देश को बेरोजगारी से उबारने के लिए इनका समुचित समाधान नितान्त आवश्यक है।

उपाय—बेरोजगारी को दूर करने में निम्नलिखित उपाय कारगर सिद्ध हो सकते हैं—

1. जनसंख्या में अत्यधिक वृद्धि बेरोजगारी का मूल कारण है, अतः इस पर नियन्त्रण बहुत आवश्यक है। जनता को परिवार-नियोजन का महत्त्व समझाते हुए उसमें छोटे परिवार के प्रति चेतना जाग्रत करनी चाहिए। 2. शिक्षा को व्यवसाय-प्रधान बनाकर शारीरिक श्रम को भी उचित महत्त्व दिया जाना चाहिए। 3. कुटीर उद्योगों के विकास की ओर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। 4. देश में व्यापक स्तर पर औद्योगीकरण किया जाना चाहिए। इसके लिए विशाल उद्योगों की अपेक्षा लघुस्तरीय उद्योगों को अधिक प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। 5. मुख्य उद्योगों के साथ-साथ सहायक उद्योगों का भी विकास किया जाना चाहिए, जैसे—कृषि के साथ पशुपालन तथा मुर्गीपालन आदि। सहायक उद्योगों का विकास करके ग्रामीणजनों को बेरोजगारी से मुक्त कराया जा सकता है। 6. देश में बेरोजगारी को दूर करने के लिए राष्ट्र-निर्माण सम्बन्धी विविध कार्यों का विस्तार किया जाना चाहिए। सड़कों का निर्माण, रेल-परिवहन का विकास, पुल-निर्माण तथा वृक्षारोपण जैसे कार्यों पर बल दिया जाना चाहिए।

उपसंहार—हमारी सरकार बेरोजगारी उन्मूलन के लिए जागरूक है और इस दिशा में उसने महत्त्वपूर्ण कदम भी उठाए हैं। परिवार नियोजन, बैंकों का राष्ट्रीयकरण, कच्चा माल एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने की सुविधा, कृषि-भूमि की हदबन्दी, नये-नये उद्योगों की स्थापना, अप्रेण्टिस (प्रशिक्षु) योजना, प्रशिक्षण केन्द्रों की स्थापना आदि अनेकानेक कार्य ऐसे हैं, जो बेरोजगारी को दूर करने में एक सीमा तक सहायक सिद्ध हुए हैं।

8. आतंकवाद : समस्या और समाधान

आतंकवाद का अर्थ—आतंकवाद पूर्णतया अनर्थकारी होते हुए भी अर्थ से भारी कद का है, जिसे क्षेत्रवाद, जातिवाद, मजहबवाद और सम्प्रदायवाद का बड़ा भाई कहा जा सकता है। तात्पर्य यह है कि इन सभी वादों का वीभत्स रूप आतंकवाद है। वस्तुतः आतंकवाद एक ऐसी पशु-प्रवृत्ति है, जिसकी न कोई जाति है, न धर्म है, न समाज और न ही कोई राष्ट्र है। यह तो विघटनकारी तत्त्वों

द्वारा स्वार्थान्ध होकर किया गया सामूहिक हिंसात्मक प्रयास है, जिसमें राष्ट्रदोह के प्रति राग और देशभक्ति के प्रति द्वेषभाव मुख्य रूप से रहता है।

आतंकवाद के कारण और उद्देश्य—अर्थ के अन्तर्गत प्रस्तुत आतंकवाद के स्वरूप के आधार पर इसके कारण और उद्देश्य स्पष्ट होते हैं। आतंकवादी व्यक्ति मात्र एक माध्यम होता है। उसके हाथ और हथियार किसी दूसरे के होते हैं। आतंकवादी तो लक्ष्यहीन होता है। उसे दिशा भी दूसरा व्यक्ति ही बताता है। अन्तर्राष्ट्रीय प्रगति की दौड़ में प्रत्येक राष्ट्र एक-दूसरे के प्रगति-पथ पर पत्थर रखना चाहता है। आतंकवाद भी एक पत्थर ही है जो जाति, धर्म, भाषा तथा क्षेत्र आदि को माध्यम बनाकर प्रगति-पथ पर गतिरोधक बनाकर रखा जाता है। गतिरोधक पूरे देश में अस्थिरता पैदा कर देता है, जिसके पीछे एक घृणित और कुत्सित महत्त्वाकांक्षा होती है।

भारत में आतंकवाद— आतंकवाद की आग से सर्वाधिक पीड़ित देश भारत है। हालत यहाँ तक आ पहुँची है कि 13 दिसम्बर, 2001 को हमारी संसद पर भी हमला हुआ। इसमें पाकिस्तानी खुफिया एजेंसी आई. एस. आई. के हाथ होने की पुष्टि हुई है। ऐसा ही हमला जम्मू-कश्मीर विधान सभा पर भी हो चुका है। हमारे भारत में आंतकवाद का सिर दिनों-दिन उठता ही जा रहा है। पंजाब और असम इस संत्रास से कुछ समय पहले ही बाहर आये हैं। कश्मीर की स्थिति ऐसी है कि वह अपनी व्यथा-कथा को सुना नहीं पा रहा है, क्योंकि उसके मुँह पर मात्र अपने देश के देशद्रोहियों के हाथ नहीं हैं, अपितु कई विदेशी देशों के भी हाथ हैं। आतंकवाद की लगी आग में वर्षों से जल रहे पंजाब की पीड़ा अभी शान्त भी नहीं हुई थी कि भारत का एक कोना कश्मीर कराह उठा और कहने लगा कि मुझ पर मेरे अपनो के ही खंजर भोंके जा रहे हैं। उस दिन तो कश्मीर के मुँह पर कालिख ही वहाँ के कुछ आतंकवादियों ने पोत दी, जब उन लोगों ने केन्द्रीय गृहमंत्री की युवा अविवाहिता पुत्री का अपहरण कर उसकी रिहाई के बदले उन कैदी आतंकवादियों को रिहा करा लिया, जो अपने मुँह की कालिख कश्मीर के कपोल पर पोतने का प्रयास कर रहे थे। आज भी ऐसे कुछ कश्मीरी कुपुत्र हैं, जो खाते यहाँ का हैं और गाते पाकिस्तान का हैं। अपनी माँ को दूसरे के हाथों सौंपने की बात करने वाले कुपुत्रों को कश्मीर कभी माफ नहीं कर सकता। असम आज भी बोडो आन्दोलन की आग में झुलस रहा है। कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि भारत में आतंकवाद दिनों-दिन पूरे जोर से आगे बढ़ रहा है।

आतंकवाद के अन्त का उपाय— आतंकवाद के अन्त के लिए हमें युद्धस्तर पर जूझना पड़ेगा। आज सद्भावना के प्रसार की आवश्यकता है। युवा पीढ़ी जो भटकाव के रास्ते पर है, उन्हें विश्वास में लिया जाय और उनमें देशभक्ति की भावना का प्रचार-प्रसार किया जाय। आतंकवादियों से किसी प्रकार का समझौता राष्ट्र के लिए घातक सिद्ध होगा। उन्हें देश-द्रोह के आरोप में मृत्युदण्ड दे दिया जाना चाहिए। प्रशासन को चुस्त-दुरुस्त बनाया जाय और समुचित अधिकार दिये जायें, जिससे वे हर परिस्थिति में स्वयं निर्णय ले सकें। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर आतंकवाद को बढ़ावा देने वाले राष्ट्रों के विरुद्ध संघर्ष किया जाय और उनकी निन्दा हो। आतंकवाद के आश्रयदाता पर भी देशद्रोह का आरोप लगाकर कड़ी सजा दी जानी चाहिए। भारत यदि यह समझता है कि राजनीतिक स्तर पर आतंकवाद की समस्या का समाधान है, तो उसे इसके लिए आगे बढ़ना चाहिए; लेकिन यह आवश्यक है कि समझौता 'सर कटा सकते हैं लेकिन सर झुका सकते नहीं' के सिद्धान्त से प्रेरित हो। ऐसा समझौता कठिन हो सकता है, किन्तु असम्भव नहीं।

उपसंहार—आतंकवाद और भारत क्रमशः मृत्यु और जीवन जैसे एक-दूसरे के सामने खड़े हैं। अतः प्रत्येक जनता का उत्तरदायित्व है कि वह इसको समाप्त करने के लिए अन्त तक संघर्ष करे। किसी देश में अशान्ति और आतंक फैलाना उस देश में अस्थिरता की आग फैलाना है। इससे शत्रुओं को तो बल मिलता ही है, धन-जन की भी बहुत हानि होती है। प्रगतिवादी योजनाओं की प्रगति के पाँव रुक जाते हैं। प्रशासन का पूरा समय आतंकवाद से निपटने में लग जाता है। अतः यदि हम चाहते हैं कि हम और हमारा भारत शान्तिमय रहे, अहिंसा के पथ पर चले और अन्य बड़े देश की भाँति प्रगति के पथ पर चले, तो भारत के जन-जन का यह नैतिक कर्त्तव्य है कि वे आतंकवाद के विरुद्ध आवाज उठाएँ।

9. साहित्य समाज का दर्पण

साहित्य का अर्थ— साहित्य वह है, जिसमें हित की भावना निहित है। साहित्य मानव के सामाजिक सम्बन्धों को दृढ़ बनाता है; क्योंकि साहित्य में सम्पूर्ण मानव-जाति का हित निहित रहता है। साहित्य द्वारा साहित्यकार अपने भावों और विचारों को समाज में प्रसारित करता है, इस कारण उसमें सामाजिक जीवन स्वयं मुखरित हो जाता है।

साहित्य और समाज का पारस्परिक सम्बन्ध— साहित्य और समाज का सम्बन्ध अन्योन्याश्रित है। साहित्य समाज का प्रतिबिम्ब है। साहित्य का सर्जन जन-जीवन के धरातल पर ही होता है। समाज की समस्त शोभा, उसकी श्रीसम्पन्नता और मान-मर्यादा साहित्य पर अवलम्बित है। सामाजिक शक्ति या सजीवता, सामाजिक अशान्ति या निर्जीवता, सामाजिक सभ्यता या असभ्यता का

निर्णायक एकमात्र साहित्य ही है। कवि एवं समाज एक-दूसरे को प्रभावित करते हैं; अतः साहित्य से भिन्न कोई वस्तु नहीं है। यदि समाज शरीर है तो साहित्य उसका मस्तिष्क।

जातियों की क्षमता और सजीवता यदि कहीं प्रत्यक्ष देखने को मिल सकती है तो साहित्य रूपी दर्पण में। साहित्य हमारी जिज्ञासावृत्ति को शान्त करता है, ज्ञानपिपासा को तृप्त करता है और मस्तिष्क की क्षुधापूर्ति करता है। साहित्य के द्वारा ही हम अपने राष्ट्रीय इतिहास से, अपने देश की गौरव-गरिमा से, अपनी संस्कृति और सभ्यता से, अपने पूर्वजों के अनुभव से, विचारों एवं अनुसन्धानों से, अपने प्राचीन रीति-रिवाजों से, रहन-सहन और परम्पराओं से परिचय प्राप्त कर सकते हैं।

साहित्य हमारे अमूर्त अस्पष्ट भावों को मूर्तरूप देता है और उनका परिष्कार करता है। वह हमारे विचारों की गुप्त शक्ति को सक्रिय करता है। साथ ही साहित्य गुप्त रूप से हमारे सामाजिक संगठन और जातीय जीवन के विकास में निरन्तर योग देता रहता है। साहित्यकार हमारे महान विचारों का प्रतिनिधित्व करते हैं। इसलिए हम उन्हें अपने जातीय सम्मान और गौरव का संरक्षक मानकर यथेष्ट सम्मान प्रदान करते हैं। शेक्सपियर एवं मिल्टन पर अंग्रेजों को गर्व है, कालिदास, सूर एवं तुलसी पर हमें गर्व है। इस प्रकार साहित्य युग और परिस्थितियों की अभिव्यक्ति है। यह अभिव्यक्ति हृदय के माध्यम से होती है। कवि और साहित्यकार अपने युग को अपने आँसुओं से सींचते हैं, ताकि आनेवाली पीढ़ियाँ उसके मधुर फल का आस्वादन कर सकें।

साहित्य पर समाज का प्रभाव— साहित्य और समाज का ठीक वही सम्बन्ध है, जैसे आत्मा और शरीर का। जिस प्रकार बिना आत्मा के शरीर व्यर्थ है, ठीक उसी प्रकार बिना साहित्य के समाज का कोई अस्तित्व नहीं है। साहित्य के निर्माण में समाज का प्रमुख हाथ होता है। इसलिए समाज में होने वाले परिवर्तनों का प्रभाव साहित्य पर बराबर पड़ता रहता है। यदि कोई साहित्य सामाजिक परिवर्तनों से अछूता रह गया है तो निश्चय ही वह निष्प्राण है। उदाहरण के लिए यदि आधुनिक युग में कोई साहित्यकार 'शृंगार' की रचनाएँ अलापने लगे तो वह निश्चय ही आज के सामाजिक परिवर्तन से अछूता है और उसका साहित्य न तो युग का प्रतिनिधित्व कर सकने में समर्थ होगा और न भावी पीढ़ी को कोई नयी दिशा ही दे पायेगा।

समाज पर साहित्य का प्रभाव—एक ओर जहाँ साहित्य समाज से अपनी जीवनी शक्ति ग्रहण करता है, दूसरी ओर वह समाज के पूर्णतः बौद्धिक, मानसिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक विकास के लिए दिशा-निर्देश करता है। साहित्य की छाया में समाज अपनी क्लान्ति और निराशा को दूर कर नवजीवन प्राप्त करता है। साहित्य से ही प्रेरणा लेकर समाज अपना भावी मार्ग निर्धारित करता है। समाज जहाँ युग-भावना में डूबा हुआ निष्क्रिय और निष्प्राण पड़ा रहता है, साहित्य उसमें युग-चेतना का स्वर भरता है, उसे जगाता है और उसे सारी परिस्थितियों से जूझने के लिए प्रोत्साहित करता है।

उपसंहार— इस प्रकार स्पष्ट है कि किसी जाति अथवा समाज का साहित्य उस जाति अथवा समाज की शक्ति अथवा सभ्यता का द्योतक है। वह उसका प्रतिरूप, प्रतिच्छाया, प्रतिबिम्ब कहला सकता है। दूसरी ओर साहित्य अपने समाज को जीवनी शक्ति प्रदान करता है, उसे आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करता है। अतः साहित्य और समाज के पारस्परिक सम्बन्धों का विवेचन करने के उपरान्त साहित्य-सर्जना में विशेष सतर्कता रखने की आवश्यकता है। जो साहित्य समाज के लिए हितकारी न हो, जिससे समाज को कोई ठोस दिशानिर्देश न मिले, जिसमें समाज का वास्तविक स्वरूप प्रतिभासित न हो, वह साहित्य निश्चय ही साहित्य कहे जाने योग्य नही है।

10. जनसंख्या विस्फोट : समस्या और समाधान

प्रस्तावना—जिस देश को कभी सोने की चिड़िया कहा जाता था, जहाँ कभी दूध की नदियाँ बहा करती थीं, उसी देश के अधिकांश बच्चों को शायद आज दूध के रंग का भी पता न हो। आज असंख्य लोगों को रहने के लिए घर, तन ढकने के लिए पर्याप्त वस्त्र और खाने के लिए भरपेट भोजन भी नहीं मिल पाता। आखिर क्यों? इसका एकमात्र कारण है—जनसंख्या की अत्यधिक वृद्धि। जनसंख्या की इस अपार वृद्धि के कारण सम्पूर्ण देश की प्रगति अवरुद्ध हो रही है। भारतवर्ष में विश्व की जनसंख्या का छठा भाग निवास करती है। सन् 1981 की जनगणना के अनुसार भारतवर्ष की जनसंख्या 68.38 करोड़ थी; जबकि सन् 1991 की जनगणना के अनुसार यह संख्या बढ़कर 84.39 करोड़ हो गई। मार्च, सन् 2001 तक यह आंकड़ा 1,02,70,15,247 तक पहुँच गई। 2011 की जनगणना के अनुसार भारत की जनसंख्या 1 अरब 21 करोड़ है। यद्यपि जनसंख्या किसी देश अथवा राज्य का प्रमुख तत्त्व है और उसके बिना किसी राज्य एवं जाति की कल्पना भी नहीं की जा सकती; किन्तु 'अति सर्वत्र वर्जयेत्'। जनसंख्या की वृद्धि का यह दानव आज सम्पूर्ण भारतवर्ष के सामने मुँह बाये खड़ा है, क्योंकि जिस गति से भारतवर्ष में जनसंख्या की वृद्धि हो रही है, वह अत्यधिक दुःखदायी है।

भारतवर्ष में जनसंख्या-वृद्धि के कारण—भारतवर्ष में जनसंख्या की अत्यधिक वृद्धि के कुछ विशेष कारण हैं, जिनमें बाल-विवाह, बहु-विवाह, दरिद्रता, मनोरंजन के साधनों का अभाव, गर्म जलवायु, अशिक्षा, रूढ़िवादिता, ग्रामीण क्षेत्रों में सन्तति-निरोध की सुविधाओं का कम प्रचार हो पाना, परिवार-नियोजन के नवीनतम साधनों की अनभिज्ञता एवं पुत्र की अनिवार्यता आदि मुख्य कारण हैं।

जनसंख्या की उत्तरोत्तर वृद्धि से हानि—भारत की वर्तमान आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक समस्याओं का मुख्य कारण बढ़ती हुई जनसंख्या है। 'ऋग्वेद' में कहा गया है—"**जहाँ प्रजा का आधिक्य होगा, वहाँ निश्चय ही दुःख एवं कष्ट की मात्रा अधिक होगी।**" यही कारण है कि आज भारत में सर्वत्र अशिक्षा, गरीबी, बेरोजगारी, भुखमरी, निम्न जीवन-स्तर, सामाजिक कलह, अस्वस्थता एवं खाद्यान्न-संकट आदि अनेकानेक समस्याएँ निरन्तर बढ़ रही हैं। निश्चय ही जनसंख्या का यह विस्फोट भारत के लिए अभिशाप है। प्रसिद्ध अर्थशास्त्री **माल्थस** का विचार है कि "जनसंख्या की वृद्धि गुणोत्तर गति से होती है, जबकि उत्पादन अंकगणितीय गति से।" **प्रो. कारसाण्डर्स** का अनुमान है कि "संसार की जनसंख्या में एक प्रतिशत प्रति वर्ष की गति से वृद्धि हो रही है।" यदि यह वृद्धि इसी गति से होती रही तो पाँच-सौ वर्ष पश्चात् मनुष्यों को पृथ्वी पर खड़े होने की जगह भी नहीं मिल पाएगी। इसी बात को प्रसिद्ध हास्य कवि **काका हाथरसी** ने अपनी विनोदपूर्ण शैली में इस प्रकार लिखा है—

यदि यही रहा क्रम बच्चों के उत्पादन का,
तो कुछ सवाल आगे आएँगे बड़े-बड़े।
सोने को किंचित जगह धरा पर मिले नहीं,
मजबूरन हम तुम सब सोएँगे खड़े-खड़े।

हमारे देशवासी जनसंख्या की वृद्धि से होने वाली हानियों के प्रति आज भी लापरवाह हैं। इतना ही नहीं, वे सन्तान को ईश्वर की देन मानते हुए उसके जन्म पर नियन्त्रण करना पाप मानते हैं। निश्चित ही जनसंख्या की वृद्धि का यदि यही क्रम रहा तो मानव-जीवन अत्यधिक संघर्षपूर्ण एवं अशान्त हो जाएगा।

भूतपूर्व प्रधानमन्त्री **श्रीमती इन्दिरा गांधी** ने जनसंख्या विस्फोट से होने वाली हानियों पर अपने विचार प्रकट करते हुए कहा था कि "जनसंख्या के तीव्र गति से बढ़ते रहने पर योजनाबद्ध विकास करना, बहुत-कुछ ऐसी भूमि पर मकान खड़ा करने के समान है, जिसे बाढ़ का पानी बराबर बहाए ले जा रहा है।"

परिवार नियोजन की उपयोगिता—संसार के समस्त प्राणी अपने जीवन को सुखी एवं व्यवस्थित बनाना चाहते हैं। ऐसा तभी सम्भव है, जबकि व्यय का अनुपात आय के अनुकूल हो। व्यक्ति व्यय को तो नियन्त्रित कर सकता है, किन्तु आय की सीमाएँ होती हैं। यदि परिवार सीमित है तो व्यक्ति कम आय में भी अपने बच्चों की पढ़ाई-लिखाई पर ध्यान दे सकता है और स्वयं को भी व्यवस्थित रख सकता है। परिवार सीमित रहे, इसके लिए आवश्यक है–परिवार नियोजन। बढ़ती हुई जनसंख्या पर नियन्त्रण रखने का सर्वोत्तम साधन ब्रह्मचर्य का पालन है; किन्तु इस भौतिकवादी युग में इसका पूर्णतया पालन सम्भव प्रतीत नहीं होता। नियोजित परिवार के लाभ हमारे देशवासियों से छिपे नहीं हैं। 'छोटा परिवार सुखी परिवार' का सन्देश अब जन-जन का कण्ठहार बन गया है। परिवार नियोजन का चिह्न 'लाल तिकोन' है जो 'स्वास्थ्य, शिक्षा एवं समृद्धि' अथवा 'सुख, शान्ति और विकास' का प्रतीक है। यह चिह्न 'पति, पत्नी एवं बालक' का भी सूचक है। परिवार नियोजन से देश, समाज तथा व्यक्ति तीनों को ही लाभ है। परिवार नियोजन अपनाकर प्रत्येक व्यक्ति अपना जीवन सुख एवं शान्ति से व्यतीत कर सकेगा, उसके रहन-सहन का स्तर ऊँचा हो सकेगा तथा वह अपने आश्रितों की प्रत्येक आवश्यकता की पूर्ति करता हुआ उन्हें अधिक सुखी रख सकेगा। वास्तव में कम बच्चों वाले माता-पिता अपने सभी बच्चों की शिक्षा एवं उनके स्वास्थ्य का समुचित प्रबन्ध अवश्य कर सकते हैं। इस प्रकार देश की अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाने एवं निर्धनता के अभिशाप को दूर करने में परिवार-नियोजन का महत्त्वपूर्ण स्थान है।

पंचवर्षीय योजनाओं में परिवार-नियोजन की प्रगति—प्रथम पंचवर्षीय योजनाओं में परिवार नियोजन कार्यक्रम केवल शहरी अस्पतालों तक ही सीमित रहा। केन्द्रीय सरकार ने 146 तथा राज्य सरकारों ने 205 परिवार नियोजन केन्द्र शहरों व गाँवों में स्थापित किए। द्वितीय पंचवर्षीय योजना में परिवार नियोजन कार्यक्रम को गाँवों तक पहुँचाने की चेष्टा की गई। तृतीय पंचवर्षीय योजना में सरकार ने ग्रामीणों को परिवार नियोजन की आवश्यकता एवं उसके महत्त्व का ज्ञान कराकर उन्हें इस कार्यक्रम को अपनाने के लिए प्रेरित किया। चतुर्थ योजनाकाल में केन्द्रों की संख्या न बढ़ाकर पुराने केन्द्रों पर ही सुविधाएँ बढ़ाने का प्रयत्न किया गया। पाँचवीं पंचवर्षीय योजना में परिवार नियोजन को राष्ट्रीय स्तर पर अत्यधिक महत्त्व देकर इस कार्यक्रम के तीव्र क्रियान्वयन हेतु परिवार नियोजन अपनाने वाले दम्पतियों को पुरस्कार आदि देकर प्रोत्साहित किया गया। इसके अतिरिक्त भारत सरकार ने जनसंख्या विस्फोट पर नियन्त्रण हेतु 'गर्भपात अधिनियम' भी बनाया, जिससे अनचाहे गर्भ से छुटकारा पाने को वैधानिक समर्थन प्राप्त हुआ। छठवीं, सातवीं तथा आठवीं पंचवर्षीय योजनाओं में भी सरकार ने इस ओर विशेष ध्यान दिया। अब प्रत्येक गाँव में प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र खोले जाएँगे और वहाँ परिवार नियोजन-सम्बन्धी पूर्ण सुविधाएँ उपलब्ध कराई जाएँगी तथा जगह-जगह पर कैम्प लगाकर नवीन पद्धतियों के माध्यम से परिवार-नियोजन-कार्यक्रम में तीव्रता लाई जाएगी।

जनसंख्या नियन्त्रण के उपाय—जनसंख्या की वृद्धि को रोकने के लिए कुछ उपाय निम्नलिखित प्रकार के हो सकते हैं—

(1) बाल-विवाह एवं बहु-विवाह जैसी कुप्रथाओं पर रोक लगाई जाए।

(2) परिवार नियोजन कार्यक्रम का व्यापक प्रचार किया जाए।

(3) विवाह की आयु में वृद्धि करके लड़कियों के लिए न्यूनतम आयु 20 वर्ष एवं लड़कों के लिए 25 वर्ष निर्धारित की जाए।

(4) बच्चों की आयु में अन्तर रखने के लिए परिवार नियोजन सम्बन्धी सामग्री अपनाने की प्रेरणा दी जाए।

(5) अधिक बच्चों को जन्म देने वाले माता-पिता को हतोत्साहित किया जाए। इसके लिए उन्हें विभिन्न शासकीय सुविधाओं से वंचित रखा जाए, भले ही वे किसी भी वर्ग के हों।

उपसंहार—आज भारतवर्ष में वे कुप्रथाएँ समाप्त होती जा रही हैं जिनसे जनसंख्या में वृद्धि हो रही थी। बाल-विवाह जैसी कुप्रथा अब लगभग समाप्त हो गई है और शिक्षा का निरन्तर प्रसार हो रहा है। परिणामतः भारतीय जनता परिवार नियोजन के महत्त्व को जानकर जनसंख्या की वृद्धि को रोकने के लिए प्रयासरत है। चिकित्सा-क्षेत्र में नवीन पद्धतियों के आने से, गर्भ निरोध के साधनों के प्रति जनता का भय समाप्त हो गया है। अतः राष्ट्र हित को देखते हुए हमें जनसंख्या वृद्धि पर नियंत्रण रखना होगा तभी देश प्रगति के पथ पर अग्रसर होगा।

11. धर्म और राजनीति

आधुनिक युग में विद्वानों का मत है कि धर्म और राजनीति एक-दूसरे के विरोधी हैं। इसलिए भारत को धर्म निरपेक्ष राष्ट्र घोषित किया गया है। अंग्रेजों की धर्म-नीति और राजनीति एक-दूसरे से मिली हुई थी। इसलिए वहाँ की प्रगति हुई, परन्तु भारत में धर्म और राजनीति एक-दूसरे के विरोधी रहे, इसलिए यहाँ के लोग प्रगति की दौड़ में पीछे रह गये।

धर्म का अर्थ—'धारयति सः धर्मः' अर्थात् जो धारण करता है, वही धर्म है। प्रकृति रूप में आत्मा जिस आचरण को धारण करती है, वही धर्म है। अतः प्रेम, उदारता, करुणा, कर्त्तव्यपरायणता, ईमानदारी आदि सभी धर्म के ही अंग हैं। इसके विपरीत लालच, स्वार्थ आदि सभी अधर्म के अन्तर्गत हैं।

धर्म का स्वरूप—आज यहाँ मन्दिर, गिरजाघर आदि में ईश्वर की पूजा, उपासना, रोजा आदि क्रिया-कर्मों को धर्म माना जाता है। सात्विक प्रवृत्तियों को धर्म और तामसिक प्रवृत्तियों को अधर्म माना गया। धर्म के विविध स्वरूप हमारे सामने आते हैं जैसे–हिन्दू धर्म, मुस्लिम धर्म, ईसाई धर्म, जैन धर्म आदि।

राजनीति, धर्म और नीति—राजनीति भी मानव को ऐसी नीति पर चलना सिखाती है, जिससे मानव अधिकाधिक सुख व समृद्धि का जीवन व्यतीत कर सके। जब धर्म मानव को आत्म-शुद्धि करके चिन्तन-सुख और आनन्द की ओर ले जाता है, तब राजनीति मानसिक शान्ति व भौतिक सुख-समृद्धि देने की योजना बनाती है। राजनीति राज्य की सृष्टि करती है, जो राज्य के जनों के लिए शान्ति-व्यवस्था की स्थापना करता है तथा उन्हें अर्थोपार्जन के अवसर प्रदान करता है। आत्मशुद्धि के लिए जिस साधना की आवश्यकता है, उसकी मनःस्थिति समाज में शान्ति-व्यवस्था व आर्थिक समृद्धि पर आधारित है। जिस समाज में अराजकता, अनाचार, उत्पीड़न व अशान्ति का साम्राज्य हो, उसमें आत्म-साक्षात्कार के लिए साधना की मनःस्थिति बन ही नहीं सकती। इस प्रकार राजनीति धार्मिक वातावरण की प्रस्थापना में महत्त्वपूर्ण अंग है। दूसरी ओर धार्मिक वृत्ति के जन जो प्रेम, उदारता, सहिष्णुता, ईमानदारी व कर्त्तव्य-परायणता की भावना से परिपूर्ण होते हैं, वे ही जन-जन के लिए सुख-शान्ति का मार्ग प्रशस्त करने वाली राजनीति चला सकते हैं। अधार्मिक जन तो अन्याय, अनीति व अनाचार की राजनीति की यातना में जीने के लिए विवश करते हैं।

धर्म और राजनीति—आज के राजनेता यह घोषणा करते हैं कि धर्म को राजनीति से अलग रखना चाहिए। सम्राट अशोक ने भी धर्म का आश्रय लेकर प्रेम, उदारता, करुणा व सहिष्णुता का सन्देश दिया था। छत्रपति शिवाजी ने भी धर्म का आश्रय लेकर हिन्दू-मुसलमानों में एकता का बीजारोपण किया था। इतिहास इस बात का प्रमाण है कि किसी हिन्दू राजा ने धर्म के नाम पर युद्ध नहीं किया, बल्कि अन्याय-अत्याचार के विरुद्ध उसने संघर्ष किया है। औरंगजेब की इस्लामी धर्मान्धता के कारण ही मुगल साम्राज्य का पतन हुआ।

उपसंहार—उपर्युक्त विवेचना से स्पष्ट है कि धर्म के तात्त्विक परिवेश को ही देखना चाहिए और उसका अनुसरण करना चाहिए। साम्प्रदायिकता और धर्मान्धता एक विष है, जो स्वयं अपने अनुयायियों का विनाश करती है। जो व्यक्ति धर्म के वास्तविक स्वरूप को अपनाता है, वही व्यक्ति सुखी रहता है, जो मानव नहीं है, वह राजनेता होने योग्य नहीं है, क्योंकि धार्मिक व्यक्ति ही कुशल राजनेता है और मानवता का प्रेमी है।

12. विद्यार्थी जीवन में अनुशासन

प्रस्तावना–विद्या का विनय से अत्यन्त ही घनिष्ठ सम्बन्ध है। **'विद्या ददाति विनयं'** के आधार पर विद्या से ही विनय का प्रादुर्भाव होता है, किन्तु आज देश का दुर्भाग्य है कि विद्या मन्दिरों में जहाँ विनयशीलता का साम्राज्य होना चाहिए, वहाँ घोर अनुशासनहीनता अपना दानवी दामन पसारे क्रूरता भरा अट्टहास कर रहा है। चारों ओर उच्छृंखलता का ही बोलबाला है। न अध्यापकों में गुरु की गरिमा है और न छात्रों में शिष्य का शील स्वभाव।

अनुशासन से तात्पर्य–'अनुशासन' शब्द 'शास्' धातु से बना है, जिसका तात्पर्य 'शासन' अथवा 'नियन्त्रण' करना होता है। विश्व के सारे कार्य-कलाप चाहे वे जड़ से सम्बद्ध हों अथवा चेतन से एक निश्चित नियम से आबद्ध होते हैं। पृथ्वी, सूर्य, चन्द्रमा नियमानुसार नित्य एक निश्चित गति से चक्कर लगाते रहते हैं। एक निश्चित अवधि पर ऋतुओं में परिवर्तन होता रहता है। यद्यपि प्रत्यक्ष रूप से इनका नियन्त्रणकर्ता दिखाई नहीं पड़ता, किन्तु ब्रह्माण्ड का कण-कण अनुशासन से आबद्ध होता है। मनुष्य सामाजिक और वैज्ञानिक नियमों से नियन्त्रित होता है, तो ऋतुएँ काल से नियन्त्रित होती हैं। यदि ये नियन्त्रण टूट जायँ, तो विश्व में बर्बरता व्याप्त हो जाय और संसार प्रलय के कगार पर लड़खड़ाता दिखाई देने लगे। अनुशासन के नियन्त्रण से जीवन सुखी और शान्त होता है। बिना अंकुश का हाथी, बिना लगाम का घोड़ा जिस प्रकार भयंकर और विनाशकारी होता है, ठीक उसी प्रकार अनुशासन रहित समाज अत्यन्त ही विनाशकारी होता है। अनुशासन जीवन को गति देता है, उसे सुरक्षित रखता है और जीवन के उद्देश्यों को सार्थक बनाता है। अनुशासन से व्यक्ति में शक्ति और आत्म-विश्वास की भावना का उदय होता है। उसका मनोबल ऊँचा होता है।

अनुशासन का महत्त्व–मानव जीवन में अनुशासन का बहुत बड़ा महत्त्व है। अनुशासन से तात्पर्य मुख्यतः आत्मानुशासन से ही है। नियन्त्रण तो भय और दबाव से भी किया जा सकता है, किन्तु उसका प्रभाव अस्थायी होता है। भय और दबाव समाप्त हो जाने के पश्चात् पुनः उच्छृंखलता की पूर्व स्थिति आ जाती है, जो अपने लिए, समाज के लिए और सारे विश्व के लिए अत्यन्त ही घातक होती है। अनुशासन अपने सच्चे अर्थों में ही सार्थक होगा, जो स्वेच्छा से ग्राह्य किया गया हो। जीवन के कार्य-क्षेत्र में हमारे लिए अनेक कल्याणकारी नियम बनाये गये। उनका पालन करना हमारे कर्त्तव्य के अन्दर आता है। उन नियमों का पालन कानून या डण्डे के बल पर सदैव नहीं कराया जा सकता। व्यक्ति को स्वयं अपने को उन नियमों के अन्तर्गत नियन्त्रित करना होगा। यदि समाज के सभी प्राणी पूर्णतः नियन्त्रित और अनुशासित हो जायँ तो सर्वत्र सुख और शान्ति का साम्राज्य व्याप्त हो जाय। धरती पर स्वर्ग उतर आये। अनुशासन सभी सुखों की जड़ है। वह कठोरता का ऐसा पाषाणखण्ड है, जिसके नीचे आनन्द का मधुर जल-स्रोत छिपा हुआ है।

विद्यालयों में अनुशासनहीनता और उसके कारण–यह हमारे देश का दुर्भाग्य है कि विद्यालयों में, जहाँ हमारे राष्ट्र के भावी निर्माता गढ़े जा रहे हैं, अनुशासनहीनता अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच चुकी है। सरस्वती के पावन मन्दिर में अनुशासनहीनता के कारण दानवीर बर्बरताओं का ही राज्य है। छात्र अपने कर्त्तव्य को भूल गया है और अपने अधिकार की जोरदार माँग कर रहा है। विद्यालयों में शांतिपूर्ण शैक्षणिक वातावरण बनाने के लिए आज गम्भीरतापूर्वक चिन्तन-मनन की आवश्यकता महसूस हो रही है। मोटे तौर पर विचार किया जाय तो विद्यालयों में व्याप्त इस अनुशासनहीनता के पीछे निम्नलिखित कारण काम कर रहे हैं—

(क) अभिभावकों द्वारा बालकों की उपेक्षा–आज का अभिभावक अपने बच्चों को विद्यालय की चहारदीवारी के भीतर बन्द करा कर अपने उत्तरदायित्व से मुक्ति पा लेता है। परिणाम यह होता है कि बालक विद्यालय के घेरे से बाहर आते ही उन्मुक्त वातावरण में अपने को स्वच्छन्द पाता है और अनुशासनहीन हो जाता है।

(ख) दोषपूर्ण शिक्षा-प्रणाली–मैकाले की शिक्षा-प्रणाली आज भी बिना किसी परिवर्तन के स्वतन्त्र भारत में भी ज्यों की त्यों व्यवहार में लाई जा रही है। येन-केन-प्रकारेण छात्र किसी भी प्रकार उत्तीर्ण होकर प्रमाण-पत्र पाने के लिए एड़ी-चोटी का पसीना एक करता है। भले ही उसमें योग्यता कुछ न हो, किन्तु प्रमाण-पत्र प्राप्त करके वह अपनी रोजी-रोटी पा सकता है, अतः इसके लिए बेकारी और बेरोजगारी के इस युग में वह नकल करता है, रोकने पर झगड़े के लिए उतारू होता है, छुरे और तमंचे निकालता है। इस प्रकार दोषपूर्ण शिक्षा-प्रणाली के कारण भी छात्रों में अनुशासनहीनता अंकुरित होती है।

(ग) राजनीतिक दलों का प्रोत्साहन–अपरिपक्व बुद्धि वाले छात्रों को अनुशासनहीन बनाने में राजनीतिक दलों का पूरा-पूरा हाथ है। ये छात्रों की लोकतान्त्रिक शासन-व्यवस्था के प्रशिक्षण के नाम पर विद्यालयों में छात्र-संघों की स्थापना कराते हैं और उन्हीं की आड़ में अपना राजनीतिक रोटी सेंकते हैं। छात्र इतने भावुक और संवेदनशील होते हैं कि आवेश में आकर बड़े-से-बड़ा अनर्थ कर देने में भी इन्हें कोई हिचक नहीं है।

(घ) अध्यापकों के प्रति श्रद्धा का अभाव—आज का छात्र अध्यापक को अपना गुरु नहीं सेवक मानता है। गुरु के प्रति जो श्रद्धा होनी चाहिए, वह उसमें नहीं है। इसके पीछे प्रबन्ध समितियों की पारस्परिक कलह, विद्यालयों की बढ़ती हुई संख्या, समाज दूषित वातावरण आदि अनेक कारण हैं। इसके साथ-ही-साथ अध्यापकों की दोष-पूर्ण कार्यक्षमता भी इसमें कम सहायक नहीं है।

अनुशासनहीनता के निराकरण का प्रयास—विद्यालयों में व्याप्त इस घोर अनुशासनहीनता के निराकरण के लिए उपाय सोचना होगा। छात्रों में असन्तोष को दूर करने के लिए उसके सभी अभावों को दूर करना होगा। भावी जीवन के प्रति उसे आश्वस्त करना होगा। छात्र-संघों के वास्तविक उद्देश्य को समझाना होगा। इसके साथ-ही-साथ सरकार ने राजनीतिक दलों से पृथक् रहने के लिए छात्रों पर कठोर कदम उठाये हैं। इस प्रकार छात्रों ने अपने कर्त्तव्य को समझा है और बहुत आशा है कि विद्यालयों में अनुशासनहीनता की समस्या कुछ अंशों तक समाप्त हो जाएगी।

उपसंहार—इसमें सन्देह नहीं कि छात्रों में असीम शक्ति भरी हुई है। मनुष्य ने झरनों और प्रपातों के जल को अनुशासित करके असीम शक्ति एकत्रित करने में सफलता प्राप्त कर ली है। यदि छात्रों की इस असीम शक्ति को भी अनुशासित करके देश और समाज-कल्याण के कार्यों में लगाया जाय तो निश्चय ही इससे राष्ट्र का बहुत बड़ा हित होगा।